अहिंसा, आगम और विज्ञान से आलोकित श्रेष्ठतम पत्रिका

भाव विज्ञान

BHAV VIGYAN

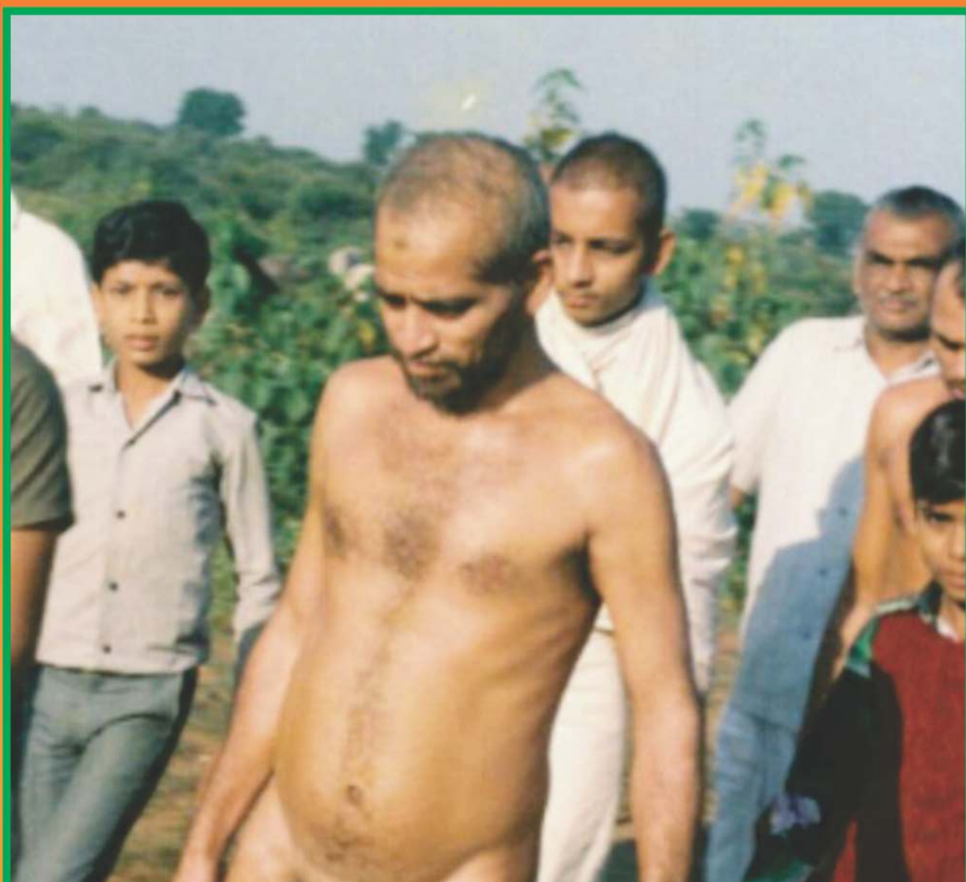

आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज

(आ.श्री के पीछे मोक्षमार्ग पर चलते ब्र. पारस)

वीर निर्वाण संवत् - 2544
अंक : तेतालीस
पौष शुक्ल, वि.सं. 2075, मार्च 2018
वर्ष : ग्यारह

आ.श्री आर्जवसागरजी महाराज के साथ विहार करते हुए बनवार के रास्ते पर विधायक श्री प्रतापसिंह लोधी।

फुटेराकलाँ में आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज का चतुर्थ आचार्य पदारोहण पर उनके पावन प्रवचन।

महावीर जयंती के प्रथम दिवस के कार्यक्रम में आ.श्री आर्जवसागरजी महाराज का प्रवचन सुनते हुए जैन स्कूल के विद्यार्थी।

महावीर जयंती पर शाहपुर में पाठशाला सम्मेलन में धार्मिक प्रस्तुति देती हुईं विद्यासागर स्कूल की कन्यायें।

महावीर जयंती के द्वितीय दिवस पर पाठशाला सम्मेलन का प्रथम पुरुस्कार प्राप्त करते हुए नेहानगर, सागर के भक्तगण।

शाहपुर में दमोह की पाठशाला का द्वितीय पुरुस्कार प्राप्त करती हुईं दमोह की कन्यायें।

शाहपुर में पाठशाला सम्मेलन पर सम्मानित होते हुए नसियाँ मन्दिर दमोह के भव्यगण।

पाठशाला सम्मेलन में तृतीय पुरुस्कार पाती हुईं विद्यासागर स्कूल की कन्यायें।

आशीर्वाद व प्रेरणा
संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज से दीक्षित
आचार्यश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज ।

रजिस्ट्रेशन क्रं. MPHIN/2007/27127

त्रैमासिक
भाव विज्ञान
(BHAV VIGYAN)

वर्ष-ग्यारह
अंक - तेतालीस

● परामर्शदाता ●
पंडित मूलचंद लुहाड़िया
किशनगढ़ (राजस्थान) मोबा.: 9352088800
। सम्पादक ।
डॉ. अजित कुमार जैन,
MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स,
कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003
मो. : 9425601161, 7222963457
email : bhav.vigyan@gmail.com
● प्रबंध सम्पादक ●
डॉ. सुधीर जैन, प्राध्यापक
85, डी.के. काटेज, ई-8 एक्सटेंशन, अरेरा कालोनी, भोपाल मो. 9425011357
● सम्पादक मंडल ●
पं. जय कुमार 'निशांत', टीकमगढ़ (म.प्र.)
डॉ. संजय जैन (एडवोकेट), इंदौर (म.प्र.)
डॉ. श्रीमती अल्पना जैन (मोदी), ग्वालियर (म.प्र.)
इंजी. महेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
श्री सुनील वेजीटेरियन, दमोह (म.प्र.)
● कविता संकलन ●
पं. लालचंद जैन 'राकेश', भोपाल

● प्रकाशक ●
श्रीमती सुषमा जैन धर्मपत्नी डॉ. अजित जैन
MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003
मो.: 7024373841
email : bhav.vigyan@yahoo.co.in

● आजीवन सदस्यता शुल्क ●

पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक	:	24,500
परम संरक्षक	:	21,000
पुण्यार्जक संरक्षक	:	18,000
सम्मानीय संरक्षक	:	11,000
संरक्षक	:	5,100
विशेष सदस्य	:	3100
आजीवन (स्थायी)सदस्यता	:	1500

कृपया सदस्यता शुल्क प्रकाशक के एवं रचनाएँ प्रबंध सम्पादक के पते पर भेजें।

पल्लव दर्शिका

विषय वस्तु एवं लेखक — **पृष्ठ**

1. प्रवचन प्रमेय — आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज — 2
2. सत्पथ-दर्पण — स्व.पं. अजित कुमार शास्त्री — 15
3. पारसचन्द से बने आर्जवसागर — आर्यिकारत्न श्री प्रतिभामति माताजी — 23
4. आर्जवसागराष्टकम् — आर्यिकारत्न श्री प्रतिभामति माताजी — 26
5. जैनधर्म और विज्ञान — आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज — 27
6. जीवन के मन्दिर पर चढ़ाया समाधि का कलश — के.देवेन (दास) जैन — 31
7. समाचार — 35
8. सम्यग्ज्ञान भूषण एवं सिद्धांतभूषण पदवी हेतु ध्यातव्य सामग्री — 39
9. प्रश्नोत्तरी

लेखक एवं विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
भाव विज्ञान से संबंधित समस्त निर्णयों/न्यायों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः

प्रवचन प्रमेय

गतांक से आगे........ -आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज

तज्जयति परमज्योतिः समं समस्तैरनन्तपर्यायैः ।

दर्पणतल इव सकला प्रतिफलित पदार्थमालिका यत्र ॥ 1 ॥ (पुरुषार्थसिद्धयुपाय)

आज चौथा दिन है। कल ऋषभकुमार ने दीक्षा अंगीकार कर ली है। इसके उपरान्त तप में लीन हैं, आज उन्हें केवलज्ञान की उपलब्धि होने वाली है। इसके पूर्व उन्हें भूख लगेगी। यह सब कुछ इसलिए कह रहा हूं कि तीर्थंकर की कोई भी चर्या ''आर्टीफिशियल'' नहीं हुआ करती, दिखावट नहीं हुआ करती, प्रदर्शन के लिए भी नहीं हुआ करती। दुनिया को उपदेश देने के लिए भी नहीं हुआ करती, क्योंकि छद्मस्थ अवस्था में वे उपदेश नहीं दिया करते हैं। दिखावटी कोई नाटक नहीं किया करते हैं। ऋषभनाथ, जो मुनिराज बने हैं वे, छठवे-सातवें गुणस्थान में झूल रहे हैं, क्योंकि उनका उपयोग अभी भी श्रेणी के लायक नहीं है। अर्थ यह हुआ कि उनकी चंचलता अभी नहीं मिटी और जब (छटे, सातवें गुणस्थान परिवर्तन रूप) चंचलता नहीं मिटी तो वह क्रिया, केवल दिखाने के लिए नहीं बल्कि वेदनीय कर्म का प्रतिकार है।

कल चर्चा चल रही थी कि, महाराज! तीर्थंकरों को पीछी-कमण्डलु का विधान तो नहीं है और कल तो यहाँ दिया गया? हाँ! बात तो ठीक है। संसारी प्राणी को मुनिचर्या की सही-सही पहचान हो, ज्ञान को इसलिए ये दिया गया है। जो तीर्थंकर दीक्षित होते हैं, वे पिच्छी और कमण्डलु नहीं लेते, क्योंकि ज्यों ही वे दीक्षित होते हैं, त्यों ही उन्हें सारी ऋद्धियां प्राप्त हो जाती हैं, एक मात्र केवलज्ञान को छोड़कर। उनकी मन, वचन, काय की चेष्टा के द्वारा त्रसों का और स्थावरों का घात नहीं हुआ करता, इस प्रकार की विशुद्धि उनकी चर्या में आ जाती है। और वे वर्द्धमान चारित्र वाले होते हैं, इसलिए इसके बारे में कुछ ज्यादा कहने की आवश्यकता नहीं है, किन्तु जब वे आहार के लिए उठते हैं, त्यों ही उपकरण का विधान उपस्थित हो जाता है।

प्रवचनसार में आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने प्रस्तुत किया है कि, अरे! तूने तो सब कुछ छोड़ने का संकल्प लिया था। छोड़ने का संकल्प लेकर, अब ग्रहण करने के लिए जा रहा है। गृहस्थों के सामने हाथ यूँ करेगा (फैलायेगा), बड़ी अद्भुत बात है। चाहे तीर्थंकर हों, चाहे चक्रवर्ती हों, चाहे कामदेव हों, कोइ भी हों। कर्मों के सामने सबको घुटने टेकने पड़ेंगे। जब छोड़ने का संकल्प लेकर दीक्षा ग्रहण की थी, तो इस समय ग्रहण करने क्यों जा रहा है। **आचार्य कहते हैं- उत्सर्गमार्ग और अपवादमार्ग की सूचना आगम में है। जो व्यक्ति अपवादमार्ग को भूल जाता है वह भी फेल हो जाता है। और जो व्यक्ति उत्सर्गमार्ग को भूल जाता है वह भी फेल हो जाता है। दोनों में ही साम्य हो।** (इस चेतन के तन को आहार रूपी) वेतन देना अनिवार्य है। लेकिन यहाँ पर वेतन के साथ ''कण्डीशन'' भी है कुछ। वेतन के साथ शर्त हुआ करती है, छयालीस दोष और बत्तीस अन्तराय उनको जो स्वीकारता है उसे कहते हैं साधु। साधु शर्तों के साथ ही अपनी आत्मा की साधना करता है। आगम के अनुकूल करता है। भगवान् की चर्या भी आगम के अनुकूल होती है, विपरीत नहीं हुआ

करती। 28 मूलगुणों के धारक होते हैं वे। इसलिए एक बार ही आहार के लिए निकलने का नियम होता है, यह बात अलग है कि उनकी क्षमता 6 माह तक की रही, किन्तु 6 माह के उपरान्त वह भी उठ गये।

इस चर्या में जब चार हजार मुनि महाराज फेल हो गये तभी से प्रारम्भ हो गया है 363 मतों का (शुरुआत रूप) प्रचलन। दिगम्बर होने के उपरान्त जो शोधन करके आहार नहीं करता वह अन्य समिति वाला है। सम्यक्समिति वाला नहीं माना जाएगा। वे मुनिराज श्रावक के घर आकर आहार कब ग्रहण करते हैं जबकि श्रावक की सारी की सारी क्रिया देख लेते हैं। नवधा-भक्ति देख लेते हैं। श्रावक यदि नवधा-भक्ति करता है तो ही आहार लेते हैं, नहीं तो नहीं लेते। तो क्या हो गया था? कल किसी ने कहा था कि उन्हें अन्तरायकर्म का उदय था। बिलकुल ठीक है। किन्तु लड्डू लाकर के दिखा रहे थे, क्यों नहीं लिए उन्होंने? तब जबाव मिलता है, श्रावकों की गलती थी, मुनि महाराज की कोई गलती नहीं थी। श्रावकों की क्या गलती थी? तो उन्होंने कहा कि- नवधाभक्ति नहीं की थी। नवधा भक्ति नहीं होगी तब तक लाये गए आहार को वे नहीं लेंगे। बहुत कठिन है, यह चर्या। छह माह हो गये थे उपवास किये। उसके बाद 6 माह और अन्तराय चला। फिर भी उस क्रिया-चर्या की इति नहीं की। इस चर्या से डिगे नहीं वे। **यह मात्र जड़ की क्रिया नहीं है, किन्तु यह भीतर में छट्‌ठे-सातवें गुणस्थान में झूलता हुआ जो ज्ञानवान् चेतन भगवान आत्मा है, उसी की क्रिया है-काम है।**

एषणासमिति के कारण ही संसार में विप्लव मचा हुआ है। एक दिन के लिए भी भूख सताने लग जाए तो ''मरता क्या नहीं करता'', ''भूखा क्या-क्या करता'' ये सब कहावतें चरितार्थ हाने लगती हैं। लेकिन कितने ही कठोर उपसर्ग-परीषह क्यों न हों तो भी मुनि महाराज अपनी चर्या से तीन काल में भी डिगते नहीं। टस से मस नहीं होते। **वे कभी मांगते नहीं हैं, क्योंकि यही एक मुद्रा ऐसी रह गई है संसार में, जिसके पीछे रोटी है और बाकी जितने भी हैं वे सब रोटी के पीछे हैं। मात्र साहित्य से काम नहीं चलने वाला इस जगह। यदि हमारे पास क्रिया है, दिगम्बर मुद्रा है तो साक्षात् महावीर भगवान् को दिखा सकते हैं।** युग के आदि में जो वृषभनाथ हुए थे उनकी चर्या का पालन करने वाले आज भी हैं। यह हमारा सौभाग्य है।

यह संसारी प्राणी चार संज्ञाओं से ग्रसा हुआ है। आहार की संज्ञा से कोई निर्वृत्त नहीं है छट्‌ठे गुणस्थान तक, अर्थात् यह संज्ञा छठवें गुणस्थान तक होती है। आहार संज्ञा का मतलब है आहार की इच्छा होना। आप लोगों को भी आहार की इच्छा होती है और मुनि महाराज को भी आहार की इच्छा है। किन्तु आप लोगों को आहार की इच्छा के साथ-साथ रस की भी इच्छा होती है। रस की इच्छा जिह्वा की भूख मानी जाती है और मुनिराज को मात्र पेट की भूख होती है। वह भूख वस्तुतः भूख नहीं है। रस की भूख ऐसी भूख है कि भूत लगा देती है। संसारी प्राणी इसी भूत के पीछे ही सारे रसों का श्रृंगार करता है। खाते तो आप भी हैं, उतना ही पेट है और मुनि का पेट भी उतना ही है। फिर भी लगता है कि आपके पेट में कहीं गुंजाइश अधिक है। जिससे अन्थऊ (सांय का भोजन) की चिन्ता हुआ करती है आपको। मुनिराज को इसकी चिन्ता नहीं हुआ करती। उन्हें रात-दिन में एक बार ही चेतन को वेतन देने का काम है। इसीलिए ऋषभनाथ आपके घर ''रियल'' आयेंगे।

आचार्य ज्ञानसागर जी महाराज ने पूछा था समयसार पढ़ाते समय, बताओ-तीर्थंकर भी प्रमत्त अवस्था कैसे पकड़ोगे? समयसार की व्याख्या पढ़ने के उपरान्त पूछा था, क्योंकि उन्हें यह ज्ञात करना था कि ये किस

प्रकार अपनी बुद्धि से अर्थ निकाल पाता है। मैंने कहा- महाराजजी! आपने इस प्रकार पढ़ाया तो है ही नहीं? इसीलिए तो पूछ रहा हूँ मैं, कि कैसे पकड़ोगे? आधा-एक मिनिट सोचता रहा फिर बाद में मैंने कहा कि महाराज! जब तीर्थंकर चर्या के लिये उठते हैं, उस समय बिना इच्छा के नहीं उठते। आहार लेते समय मांगेंगे, वह भी बिना इच्छा के नहीं। तभी एक-एक ग्रास पर हम उनकी प्रमाद चर्या को पकड़ सकते हैं। जिस समय वे ग्रास लेते हैं उस समय छट्ठा गुणस्थान माना जायेगा, जो कि प्रमाद की अवस्था है। कारण कि लेने की इच्छा है। ध्यान रखना वे आहार को ऐसे ही नहीं ले लेते, हम लोगों जैसे, किन्तु यूं-यूं (अंजुलि बांधकर शोधन का इशारा) शोधन करते हैं। शोधन करने का नाम है अप्रमत्त अवस्था। ये यूँ-यूँ क्या अंगुली से? यह जड़ की क्रिया है क्या? नहीं। ऐसा कभी मत सोचना कि यह जड़ की क्रिया है किन्तु यह सप्तम गुणस्थान की क्रिया है। इसको आगम में एषणासमिति बोलते हैं। यह अप्रमत्त दशा को द्योतक है। ग्रास को लेने के लिए हाथ को यूं नीचे फैलाना, यह तो आहार संज्ञा का प्रतीक है, उस समय छट्ठा गुणस्थान है, प्रमत्त है। किन्तु शोधन के लिए यूं-यूं अंगुली का चलाना, यह सप्तम गुणस्थान है। पुनः हाथ फैलाना छट्ठा और शोधन सातवां। इस प्रकार होती है उनकी क्रिया। इतना विशेष ध्यान रखना कि आहार लेते समय रस का स्वाद, रस में चटक-मटक नहीं करते। यह बहुत सुन्दर है, बढ़िया है। ऐसा कह देंगे या मन में ऐसा भाव आ जायेगा तो गुणस्थान से नीचे आ जाएंगे। लेकिन उन्हें बढ़िया-घटिया से कोई मतलब नहीं रहता। उनके अन्दर तो ''**अरसमरुवम्गंध**'' वाली गाथा चलती रहती है। आहार देते समय श्रावक लोग कह देते हैं कि महाराज! जल्दी-जल्दी ले लो। हम शोधन करके ही तो दे रहे हैं, लेकिन नहीं। मैं तो देखकर ही लूंगा। क्योंकि आपकी एषणासमिति तो आपके लिए है, मेरी एषणासमिति मेरे लिए है। तुम्हारी जो क्रिया होगी वह तुम्हारे गुणस्थान की रक्षा करेगी और मेरी जो क्रिया होगी वह मेरी रक्षा करेगी। मेरे गुणस्थान की रक्षा करेगी। आगम की आज्ञा का उल्लंघन हम नहीं कर सकते। वह जड़ की क्रिया नहीं अपितु जड़हीन अर्थात् ज्ञानवान आत्मा की क्रिया है।

क्षुधा होती है- भूख बहुत जोरों से लगी है। तो देख लो। एक पूड़ी भी थोड़ी-सी देर से आती है तो कैसी गड़बड़ी हो जाती है भैय्या! या तो पहले भोजन पर नहीं बुलाते, बुलाना है तो पहले पूड़ी का प्रबन्ध तो कर लेते। दाल के बिना काम चल जाए लेकिन पूड़ी के बिना कैसे चले। कुछ तो मिल जाए थाली में। उसी के साथ खाकर, थाली खाली कर दें। होता यह है कि भूख की इतनी तीव्र वेदना होती है कि असह्य होती है। किन्तु मुनि महाराज कितनी ही भूख होने पर अपनी एषणा समिति को पालते हुए ही आगे का ग्रास लेते हैं। आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने तो कहा है- मुनि की परीक्षा समिति के माध्यम से ही होती है। वो जिस समय सोयेंगे, उस समय समिति चल रही है। बोलेंगे उस समय भाषा समिति चल रही है। जिस समय उठेंगे-बैठेंगे उस समय आदान-निक्षेपण समिति चल रही है। जब चलेंगे, ईर्यासमिति से चलेंगे। पूरी की पूरी समितियाँ चल रहीं हैं, किसी भी क्रिया में कमी नहीं है। इसका मतलब है- अर्थ है कि प्रत्येक क्रिया के साथ सावधानी चल रही है,यानि चौबीसों घण्टे (हमेशा) स्वाध्याय चल रहा है।

श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों में भेद होने का मूल कारण यही है- एषणासमिति। अंजलि में डालते ही खा जाना, यह रागी का काम है। मांगना रागी का काम है। परन्तु महाराज का काम है, अंजलि में आते ही ठीक-

ठीक शोधन करके खाना, रागी व्यक्तियों जैसे कभी भी नहीं खाना। शोधन करना बुद्धिमान की क्रिया है। हमें इस बात का गौरव है, गौरव ही नहीं अभिमान-स्वाभिमान भी है कि कम से कम महावीर भगवान के वीतारग-विज्ञान का तो मूर्तरूप है उसका पालन तो कर रहे हैं। इसमें गौरव होना भी सहज है। मात्र बातों के जमा खर्च से काम नहीं चल सकता किन्तु आगम की जो आज्ञा है उसका सेवन करना सर्वप्रथम आवश्यक है। जिसका पेट खाली है, वह व्यक्ति कभी भी पेट पर हाथ रखकर आनन्द का अनुभव नहीं कर सकेगा, क्योंकि वह आत्माराम को भूखा रखता है। इसीलिए मेरा कहना ये है! मेरा क्या कहना? आचार्यों का कहना है, अब आचार्यों का भी क्या कहना, दिव्यध्वनि खिरने वाली है मध्याह्न में, उसी दिव्यध्वनि का कहना है कि यदि तुम सुख का अनुभव करना चाहते हो तो, अपनी चर्या को ऐसी (सदाचारपूर्ण) बनाओ। यद्वा-तद्वा चर्या बनाओगे तो नियम से मात खा जाओगे- भटक जाओगे। आज तक मार्ग से भटकते रहे, कहीं रास्ता नहीं मिला, यही कारण है। कारण को सही-सही जानना आवश्यक है, क्योंकि कारण में ही विपर्यास हुआ करता है कार्य में नहीं। पहले भी कहा था-मंजिल में और सुख में कोई विसंवाद नहीं हुआ करता, मात्र सुख को प्राप्त कराने वाले कारणों में विसंवाद होता है। हमारी बुद्धि, जहाँ पर भी चर्या में कठिनाई होने लगती है तो उसे भूलती-भूलती चली जाती है। चलते समय ही कठिनाई होती है, बन्धुओ! बैठे-बैठे नहीं। इन सभी कठिनाइयों को पार करने का मार्ग भगवान ने बताया है। वह आज चर्या करके आगे की परम्परा का भी मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं। उनकी चर्या के उपरान्त सभी समझ सके थे कि मुनिराज को इस प्रकार चर्या करना चाहिए तथा श्रावकों को भी इसका ज्ञान हुआ।

ऋषभनाथ को 1000 वर्ष तक केवलज्ञान नहीं हुआ, तब 6-6 महिने के उपरान्त वे उठे, हजारों बार उठे। अर्थात् हजारों बार उन्हें भूख लगी, आहार की इच्छा हुई। यह छट्ठे गुणस्थान की बात है। आहार की क्रिया, जबकि सातवें गुणस्थान तक चलती है यह धवला, जयधवला और महाबन्ध के द्वारा ज्ञात होता है। अतः ज्ञानी को कोई रस सम्बन्धी, अन्न सम्बन्धी और कोई सामग्री सम्बन्धी परिग्रह नहीं रहता, नहीं रहता, नहीं रहता। जब मांगते हैं तो राग नहीं रहता क्या? रहता है, रहता है, रहता है। पर विषय सम्बन्धी नहीं रहता, नहीं रहता, नहीं रहता। फिर रहता भी है और नहीं भी रहता, यह क्या कह रहे हैं आप? जैसा कहा है वैसा ही तो कहूंगा, मैं अपनी तरफ से थोड़े ही कह रहा हूँ। विषय-सम्बन्धी राग को तो अनन्तकाल तक के लिए छोड़ दिया है उन्होंने। सामान्य जीवों जैसा ग्रहण करना उनका काम नहीं है। श्वेताम्बर कहते हैं- भगवान बनने के उपरान्त भी, वे कवलाहार लिया करते हैं। तो आचार्यों को परिश्रम और करना पड़ा। उन्होंने कहा हमें बताओ, जब आहारसंज्ञा छट्ठे गुणस्थान तक ही रहती है तब तेरहवें गुणस्थान में कैसे आहार लेंगे? इसलिए आज भी इस क्रिया का अवलोकन आप लोगों को करते रहना चाहिए। मात्र चाहिए ही क्या, किन्तु बहुत आवश्यक है, जिसमें समझ में आयेगा कि दिगम्बर परम्परा में किस प्रकार इस क्रिया को निर्दोष रखा कुन्दकुन्द भगवान ने। तूफान चला था तूफान, उस समय। जिसमें बड़े-बड़े पहाड़ भी उड़ रहे थे। लेकिन ''**बुद्धिसिरेणुद्धरियो समप्पियो भव्वलोयस्म**''। **इन महान, आध्यात्मिक ग्रन्थ .... मुनिचर्या को जीवित रखने का श्रेय, इस तूफान से बचाने का श्रेय, यदि किसी को है तो वह है आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी को। यह ध्यान रखना वे कुन्दकुन्दस्वामी केवल साहित्य लिखकर के इस मुनिमार्ग को जीवित नहीं रख पाये, किन्तु उन्होंने स्वयं**

इस चर्या को निभाया। और इसे उसी शुद्ध रूप में आज तक सुरक्षित पालन करने वाले अनेकानेक मुनिराज हुए, यह गौरव की बात है।

ऐसे मुनि महाराज ही चौबीसों घण्टे स्वाध्याय करने वाले माने जाते हैं क्योंकि षट् आवश्यकादि क्रियाओं से उनका हमेशा ही स्वाध्याय चलता रहता है। इसलिए मात्र किताबों से ही स्वाध्याय होता है, ऐसा नहीं है। जैसे कल हमने बताया था। किसी को लगा होगा कि महाराज जी ने तो स्वाध्याय का निषेध कर दिया, किन्तु यहाँ स्वाध्याय का निषेध नहीं किया गया, बल्कि इन क्रियाओं से स्वाध्याय हमारा ठीक-ठीक हो रहा है या नहीं, इसका परीक्षण होता रहता है। जो इन क्रियाओं का पालन नहीं करता, उस व्यक्ति का स्वाध्याय, स्वाध्याय नहीं माना जाएगा। समयसार में भगवान कुन्दकुन्द ने कहा है- ''**पाठो ण करेदि गुणं**''। तोता रटन्त पाठ करना गुणकारी नहीं है- कार्यकारी नहीं है।

''**आलस्याभावः स्वाध्यायः**'' कहा गया है। इसलिए नियमसार जी में उन्होंने (कुन्दकुन्द स्वामी ने) यहाँ तक कह दिया कि आपने स्वाध्याय को भुला ही दिया। स्वाध्याय को आपने बताया ही नहीं आवश्यकों के अन्दर? तो उन्होंने उत्तर दिया- एक गाथा के द्वारा- स्वाध्याय तो प्रतिक्रमण एवं स्तुति आवश्यकों में गर्भित हो जाता है यह नियमसार की गाथा है। कुन्दकुन्दस्वामी की आम्नाय के अनुसार एवं मूलाचार आदि ग्रन्थों को लेकर, आचार्य प्रणीत जितने भी आचार-संहितापरक ग्रन्थ हैं उनमें कहीं भी 28 मूलगुणों में मुनियों के लिए स्वाध्याय आवश्यक नहीं बताया गया। यदि स्वाध्याय को आवश्यकों में गिनना शुरु कर देंगे तो 29 मूलगुण हो जायेंगे, या फिर एक को अलग करके उसे रखना होगा। यह सब ठीक नहीं, अवर्णवाद कहलायेगा। व्युत्क्रम भी नहीं कर सकते, अतिक्रम भी नहीं कर सकते, अनाक्रम भी नहीं कर सकते हैं हम जिनवाणी में।

अन्यूनमनतिरिक्तं याथातथ्यं बिना च विपरीतात्।
निःसन्देहं वेदय-दाहुस्तज्ज्ञानमागमिनः॥

इस प्रकार ज्ञान की परिभाषा समन्तभद्र स्वामी ने की है। न्यूनता से रहित होना चाहिए। विपरीतता से भी रहित होना चाहिए। ज्यादा नहीं होना चाहिए। अन्यथा भी नहीं होना चाहिए। ''याथातथ्यं'' जैसा कहा गया है वैसा ही होना चहिए अन्य नहीं।

आचार्य कुन्दकुन्ददेव भी कहते हैं कि हमारे वे मुनिराज तीन काल में अपनी आत्मा को नहीं भूलते, क्योंकि यदि भूल करेंगे तो क्रियाओं में सावधानी नहीं आ सकेगी। ध्यान रखना दिव्य-उपदेश होगा मध्याह्न में, क्या कहेंगे भगवान, किसको कहेंगे और किस रूप में कहेंगे? सर्वप्रथम देशनालब्धि का अधिकारी कौन है? इसका उत्तर पुरुषार्थसिद्ध्युपाय में, जिसका कि अभी मंगलाचरण किया गया है, दिया है। जिसके पास योग्यता नहीं है उसे देशना मत दो। उसको यदि देशना देंगे तो वह अनादर-अपमान करेगा। जिनवाणी का अनादर हो जाएगा। उन्होंने कहा है- जो आठ अनिष्टकारक हैं, दुर्द्धर है, जिनका छोड़ना बहुत कठिन है। ''दुरितायतनानि'' पाप की खान है। पाप की मूल खान कौन है? मद्य, मांस, मधु और सात प्रकार के व्यसन जो इसमें आते हैं। ''जिनधर्मदेशनाया: भवन्ति पात्राणि शुद्धधियः'' इन पापों का, इन व्यसनों का त्यागी जो नहीं है

उसको यदि तुम पवित्र जिनवाणी को दोगे तो सम्भव नहीं, उसका वह सही-सही उपयोग करेगा। इसे आप सामान्य चीजें साग-सब्जी जैसा नहीं समझें। कि ठीक नहीं लगा तो बदल लिया। दो और रख दो, या कम कर दो। ऊपर से और डाल दो। ऐसा नहीं हो सकता। यह जिनवाणी है जिनवाणी? इसको जो सिर पर लेकर के उठायेगा वही इसका महत्व समझ सकेगा।

मैं स्वाध्याय का उस रूप में निषेध नहीं करता, किन्तु जिस व्यक्ति की भूमिका ही नहीं है स्वाध्याय करने की उस व्यक्ति को यदि समयसार पढ़ने के लिए दे देते हो तो, आप नियम से प्रायश्चित के भागी होंगे। ऐसा मूलाचार में कहा है। मुनिराज को कहा गया है कि जो व्यक्ति जिनवाणी का आदर नहीं करता, उसको आप अपने प्रलोभन की वजह से यदि जिनवाणी सुना देते हैं तो आप जिनवाणी का अनादर करा रहे हैं। हाँ, जिस किसी को भगवान के दर्शन नहीं कराना, किन्तु पूछताछ करके कराना। समझने के लिए यहाँ पर कोई जौहरी भी हो सकता है, जो जवाहरात का काम करता हो। उससे मैं पूछना चाहता हूँ वह अपनी तस्तरी में मोती-माणिकाओं को रखकर दिखाता-फिरता है क्या? बहुत सारी दुकाने हैं जयपुर के जौहरी बाजार में। अन्य दुकानों पर जैसा सामान लटकाए रहते हैं वैसा जौहरी बाजार में जाने के उपरान्त किसी भी दुकान में नहीं देखा। मैं पूछना यह चाहता हूँ क्या उन्होंने बेचने का प्रारम्भ नहीं किया? किया तो है, दुकान तो खोली है, फिर ग्राहक आकर पूछता है क्यों भैया! आपके पास में ये सामान है? हाँ! है तो सही, लेकिन हमारे बड़े बाबाजी अभी बाहर गए हैं, आप यहाँ शांत बैठिए। गए-बए कहीं नहीं थे। उस ग्राहक की तीव्र इच्छा की परीक्षा की जा रही थी। मात्र वह पूछने तो नहीं आया है। खरीदने के लिए भी आया है या नहीं। आप लोग उस समय तकिए के ऊपर आरामतलबी के साथ बैठे रहते हैं। 3-4 बार के निरीक्षण कर लेने के बाद, जब यह निश्चित हो जाता है कि, ये असली ग्राहक हैं तब आप डिबिया में डिबिया, डिबिया में से डिबिया और भी डिबिया और भी डिबिया में से डिबिया... फिर पुड़िया में से पुड़िया, पुड़िया में से पुड़िया... ऐसे निकालते चले जाने पर... फिर लाल रंग का कवर, फिर नीले रंग का कवर, कभी और... आते-आते अन्त में एक पुड़िया खुल ही जाती है, तो क्या कहते हैं उससे, हाथ नहीं लगाना उसको यूं दूर से ही दिखा देते हैं। किसी को नहीं कहना।

यहाँ पर भी इसी प्रकार की मूल्यवान वस्तु है जिनवाणी! जो व्यक्ति आत्मा आदि को कुछ नहीं समझता। जानने की इच्छा भी नहीं कर रहा, उसको कभी भी नहीं देना। किन्हीं-किन्हीं आचार्यों ने कहा है-आत्मा की बात तो सामने रखना, लेकिन इतना ख्याल रखना कि उसका मूल्य किसी प्रकार से कम न हो जाए, इस ढंग से रखना। जबरदस्ती नहीं करना किसी को। क्योंकि वह व्यक्ति उसका पालन नहीं कर सकता। किसी ने कहा है कि- ''भूखे भजन न होई गोपाला, ले लो अपनी कण्ठीमाला''। ऐसा कहेंगे वे आत्मा के बारे में जो उससे अपरिचित व्यक्ति है। उसे अपनी माला की आवश्यकता है, अन्य की नहीं।

स्वाध्याय का निषेध नहीं कर रहा हूँ, बल्कि भूमिका का विधान है यह। स्वाध्याय की क्रिया को करना जिसमें प्रारम्भ कर दिया है, वह तो नियम से स्वाध्याय कर ही रहा है। मैं बार-बार कहा करता हूँ- जिस समय आप खिचड़ी बनाना चाहते हैं, उस समय भी आप स्वाध्याय कर रहे होते हैं। कैसे स्वाध्याय कर रहे हैं महाराज? मैं कहता हूँ कि आप बिल्कुल सही-सही ढंग से स्वाध्याय कर रहे हैं। क्योंकि उस समय आप अभक्ष्य से बचने

के लिए एक-एक कणों का निरीक्षण कर रहे हैं। किसी ने कहा महाराज जी! समता रखना चाहिए? किन्तु कब रखना चाहिए? प्रतिकूल वातावरण में, या अनुकूल वातावरण में? बन्धुओ! भक्ष्य-अभक्ष्य के बारे में कभी समता नहीं रखना चाहिए, ध्यान रक्खो। भक्ष्य-अभक्ष्य के बारे में यदि समता रखोगे तो नियम से पिट जाओगे और गुणस्थान से भी धड़ाम से नीचे गिरोगे। उस समय बुद्धि का पूरा-पूरा प्रयोग करना चाहिए। हाँ, तो एक-एक का ज्ञान होना आवश्यक है वहाँ पर। हेय चीजें, अभक्ष्य चीजें, अनुपसेव्य चीजें जो कुछ भी मिली हुई हैं, उनको अलग-अलग निकालना हो तो क्रिया-कलाप का स्वाध्याय है। ऐसा करना भगवान की आज्ञा का अनुपालन भी है, यही सही स्वाध्याय है। जो प्रकाश रहते हुए तो इधर-उधर घूमता है जबकि अनथऊ का समय है, और जब प्रकाश नहीं रहता, उस समय जल्दी-जल्दी भोजन कर लेना चाहता है और सोचता है एक बार स्वाध्याय कर लेंगे तो सारा का सारा दोष ठीक हो जाएगा, लेकिन ध्यान रखो बन्धुओ! ऐसा नहीं होगा। वह क्रियाहीन स्वाध्याय फालतू माना जाएगा। उससे किसी प्रकार का लाभ नहीं हो सकता, क्योंकि उसकी आस्था उसके प्रति नहीं है।

आप शंका कर सकते हैं महाराज जी! छहढाला में आवश्यकों में स्वाध्याय को सामिल किया है? उसका उत्तर भी सुन लिजिए- छहढाला में जहा छठवीं ढाल में ''**नित करें श्रुतिरति**'' ये पाठ है वहाँ उसके स्थान पर संशोधन कर ''**प्रत्याख्यान**'' का प्रयोग कर लेना चाहिए। उन्हें, जिन्हें की हमेशा श्रुत की सुरक्षा की भावना रहती है। वे ऐसा पढ़ें कि- नित करें प्रत्याख्यान प्रतिक्रम तजें तन अहमेव को॥ क्योंकि स्वयं छहढालाकार ने कहा है कि ''सुधी सुधार पढ़ो सदा'' इसलिए सुधारना लेखक के अनुकूल है। इसमें दूसरा हेतु यह भी कि 28 मूलगुणों में प्रत्याख्यान नाम का एक मूलगुण ही समाप्त हो जायेगा। आप लोग तो मुनि नहीं हैं अत: इस ओर दृष्टि नहीं गई शायद। पर मैं तो मुनि हूँ 28 मूलगुणों को पालना है- जानना है, अत: मेरी दृष्टि इस ओर रही। मैंने इसे देखने के लिए कुन्दकुन्द देव का साहित्य टटोला और जितने भी आचार्य हुए हैं उनके द्वारा प्रणीत ग्रन्थों को देखा। सब जगह प्रत्याख्यान ही मिला। किसी ने भी स्वाध्याय को 6 आवश्यकों में नहीं गिना। इसलिए स्वाध्याय स्वयं प्रतिक्रमाण, स्तुति और वंदना में हो जाता है। जिसका समर्थन कुन्दकुन्द देव ने अपने नियमसार में किया है। अत: दौलतराम जी के विनीत भावों का आदर करते हुए जैसा कि उन्होंने कहा ''सुधी सुधार पढ़ो सदा'' प्रत्याख्यान पाठ कर लेना चाहिए।

एक बात का और ध्यान रखना होगा कि स्वाध्याय किस समय करें। हम स्वाध्याय करते हैं, किन्तु सामायिक के काल में नहीं करना चाहिए। तथा इसी प्रकार कुछ और समय आगम में कहे गये हैं उनमें नहीं करना चाहिए जो कि अस्वाध्याय के विधान करते हैं। उस समय में यदि करना ही चाहें तो ''**आलस्याभाव: स्वाध्याय**''। स्वध्याय का अर्थ लिखना पढ़ना नहीं है। स्वाध्याय का अर्थ वस्तुत: आलस्य के भावों का त्याग है, अर्थात् जिस व्यक्ति का उपयोग, चर्या हमेशा जागरुक रहती है उसका सही स्वाध्याय माना जाता है।

प्रवचनसार के अन्दर उत्सर्ग एवं अपवाद मार्ग के प्रकरण में आचार्य कुन्दकुन्द देव ने लिखा है कि मुनिराज के पास किसी प्रकार का ग्रन्थ भी नहीं रहता। क्योंकि शुद्धोपयोग ही मुनिराज की चर्या मानी जाती है। इससे उनके पास पिच्छि-कमण्डलु भी मात्र समिति के समय उपकरणभूत माने जाते हैं। यहाँ यह भी ध्यान

रखना चहिए कि स्वाध्याय करते-करते आज तक किसकी को (स्वरूपाचरण रूप) शुद्धोपयोग नहीं हुआ और ना ही केवलज्ञान, न हुआ है, न हो रहा है और न होगा। अत: (स्वरूपाचरण रूप) शुद्धोपयोगी मुनियों के कोई भी उपकरण नहीं होता।

दूसरी बात मैं यह कहना चाहूँगा कि, कुन्दकुन्द देव के ग्रन्थों में रचयिता का नामोल्लेख करने का श्रेय किसको है? स्वाध्याय करने वालों से पूछते हैं हम? कुन्दकुन्द स्वामी के साहित्य का आलोडन करने वालों से पूछते हैं हम? कुन्दकुन्दस्वामी का यह समयसार है, प्रवचनसार है, पंचास्तिकाय है, इस प्रकार कहने वालों में किसका नम्बर है। आचार्य कुन्दकुन्द ने तो द्वादशानुप्रेक्षा के अलावा कहीं लिखा ही नहीं कि यह मेरी कृति है। इसलिए समयसार किसका है? यह कहने का प्रथम श्रेय किसको? भरी सभा में इसलिए पूछ रहा हूँ कि स्वाध्याय करो-स्वाध्याय करो, ऐसा कहने से कुछ नहीं होने वाला। बन्धुओ! बहुत ही चिन्तन और मनन करने की बात है यह। जिसने कुन्दकुन्द स्वामी से पहचान करायी, उसका नाम लेओ कौन है वह? बार-बार कहा जाता है कि अमृतचन्द जी ने टीका लिखकर बहुत महान कार्य किया, बिल्कुल ठीक है। परन्तु उनकी टीका में कुन्दकुन्द देव का नाम तक नहीं है, नहीं है, नहीं है। क्यों नहीं है? भगवान जाने या कुन्दकुन्द देव जाने या जाने स्वयं अमृतचन्द जी। कुन्दकुन्द स्वामी के नामोल्लेख का पूरा-पूरा श्रेय मिलता है जयेसनाचार्य जी को, जयसेनाचार्य को जयसेनाचार्य को। कुन्दकुन्दस्वामी का नाम अपने मुख से लेने वालों को, बार-बार कहना चाहिए कि धन्य हैं वे जयसेनाचार्य। यदि आज वे नहीं होते हो तो हम समयसार के कर्त्ता आचार्य कुन्दकुन्द हैं इसे भी नहीं पहचान पाते, नहीं पहचान पाते। धन्य हैं वे टीकायें। ऐसी टीकायें लिखी हैं कि सामान्य व्यक्ति भी पढ़कर अर्थ निकाल सकता है। बन्धुओ! स्वाध्याय करना अलग वस्तु है और भीतरी रहस्य- गहराई को समझना अलग वस्तु है। वे सभी बातें सभा में रखना आवश्यक नहीं समझ रहा हूँ, अत: यदि विद्वान आयें तो हम उनसे विचार-विमर्श कर लें इसके बारे में। खुलकर विचार होना चहिए। जो गुत्थियाँ हैं उन्हें समझाना होगा। तभी समझूंगा कि वस्तुत: स्वाध्याय क्या वस्तु है।

प्रवचनसार में, समयसार में, पंचास्तिकाय में पांच-पांच, छह-छह बार कहा है- ''कुन्दकुन्दाचार्यदेवैर्भणितं''। उन्होंने लिखा है, हम आचार्य कुन्दकुन्द के कृपापात्र हुए हैं। ऐसे आचार्य महाराज के हम ऋणी हैं, जिन्होंने हमें दिशाबोध दिया है। जिन्होंने भी दिशा बोध दिया, उनका नाम लेना अनिवार्य है, अनिवार्य है, अनिवार्य है। जैसा कल पण्डित जी ने कहा था- **सर्वप्रथम और कोई आचार्य का नाम नहीं आता, मात्र कुन्दकुन्ददेव के अलावा। कुन्दकुन्दाम्नाय-कुन्कुन्दाम्नाय ऐसा कहना चहिये। लेकिन यहाँ ध्यान रक्खो कि कुन्दकुन्ददेव का नाम सर्वप्रथम कौन लेता है उसे भी 10 बार याद करना चाहिये, करना चाहिए, करना चाहिए। अन्यथा हम अन्धकार में रह जायेंगे। हमें जयसेनाचार्य को योग्य श्रेय देना होगा, देना होगा, देना होगा।** अमृचन्द जी का उपकार भी हम मानेंगे, लेकिन लोगों को जहाँ संदेह होता है, हो रहा है, उसका निवारण करना भी आवश्यक है। अमृतचन्द जी ने अपने नाम का उल्लेख प्रत्येक ग्रन्थ में टीकाओं के साथ-साथ किया है, अनेक विधियों से किया है, पर आचार्यकुन्कुन्ददेव का नाम एक बार भी नहीं लिया। क्यों नहीं लेते हैं? भगवान जाने और अमृतचन्द जी स्वयं जाने कि उनसे क्यों नहीं लिया गया

कुन्दकुन्ददेव का नाम। आप लोग तो मात्र कुन्दकुन्द का नाम लेते हैं किन्तु मैं कुन्दकुन्द का नाम लेता हूं और उनके बिना चलता तक नहीं। साथ ही, बीच-बीच में जयेसनाचार्य को भी, याद किये बिना चल नहीं सकता। कारण कि मुझे बिना टार्च (जयसेनाचार्य) के चला ही नहीं जाता। वह टार्च दिखाने वाले हैं, वस्तु को स्पष्ट करने वाले हैं आचार्य जयसेन स्वामी।

मैं उनको, उनकी कृपा को, उनके उपकार को कैसे भूल सकता हूँ। आज न जयसेन हैं न अमृतचन्द्र जी न कुन्दकुन्द भगवान। हम तो जिससे दिशा मिली उनका नाम लेंगे, लेंगे, लेंगे। कई लोग नाम नहीं लेना चाहते क्यों नहीं लेना चाहते? इसके बारे में हमारे मन में शंका उठी है अत: इस गूढ़ विषय की ओर स्वाध्याय करने वालों को देखना-सोचना चाहिये। यह बात हिन्दी में नहीं मिलेगी, नहीं मिलेगी, नहीं मिलेगी। आप प्रशस्ति पढ़िये, एक-एक पंक्ति पढ़िये। दिन-रात समयसार का स्वाध्याय करते हैँ, फिर भी आज तक आप इस विषय से अनभिज्ञ रहे, कि भगवान कुन्दकुन्द को प्रकाश में लाने वाले कौन हैं?

बहुत से कुन्दकुन्दाचार्य नाम के मुनिराज हुये हैं, लेकिन प्रकृत कुन्कुन्दाचार्य जी ने जो चर्या निभायी तथा उस चर्या को सुरक्षित रखकर, हम सभी को देने का श्रेय प्राप्त किया। उनके लिए बड़े-बड़े आचार्यों ने कहा था कि वे महान्-तीर्थंकर होंगे। उनका गुणानुवाद करके हम धन्य हो गये।

अमृतचन्द जी समयसार, प्रवचनसार और पंचास्तिकाय की वृत्तियों द्वारा रहस्यों को तो खोलना चाहते हैं पर कुन्दकुन्दाचार्य का नाम लिखना क्यों नहीं चाहते, यह बात समझ में नहीं आती। बड़े-बड़े व्याख्याकार यदि उनका नाम नहीं लेंगे तो हमारे लेने का क्या महत्त्व होगा? वे (अमृतचन्द) इन ग्रन्थों पर टीका करने वालों में आदि टीकाकार हैं, फिर नाम क्यों नहीं लेना चाहते। कुन्दकुन्ददेव के साहित्य का स्वाध्याय करने-प्रचारित करने वालों को तो कम से कम सोचना अवश्य चाहिए कि टीकाकार मूलकर्ता का नाम क्यों नहीं ले रहे हैं, विषय बहुत गंभीर एवं चिन्तनीय है।

आगे मैं यह कहना चाहता हूँ कि वहीं पुरुषार्थसिद्धयुपाय में कह रहे हैं कि जब तक सप्तव्यसनों का त्याग नहीं होता, तब तक स्वाध्याय करने की योग्यता किसी भी व्यक्ति के पास नहीं आती। वैसे सप्त व्यसन राष्ट्र की उन्नति के लिए भी हानिकारक हैं और आत्मोन्नति के लिए भी। इस तरह जब देशनालब्धि की पात्रता के लिए सप्तव्यसनों के त्याग का विधान किया गया है, तब स्वाध्याय करने के पहले इतना तो नियम दिला देना/ले लेना चाहिए, बाद में स्वाध्याय आरम्भ करें। इसे मैं क्रमबद्ध स्वाध्याय कहता हूँ। अन्यथा आप क्रमबद्धपर्याय की चर्चा तो करते रहेंगे, जिससे कि कुछ भी लाभ होगा नहीं तब तक, जब तक कि स्वाध्याय को कम से कम क्रमबद्ध नहीं करते।

एक आन्दोलन चला था, ब्रिटिश गर्वन्मेंट को भारत से निकालने के लिए। कैसे निकाला जाए? तो उनकी जितनी भी चीजें हैं, परम्परायें है, उन सबको समाप्त कर देना आवश्यक होगा। इसी क्रम में शिक्षणप्रणाली को लेकर के विरोध चला। गांधीजी ने शिक्षणप्रणाली को लेकर आन्दोलन चलाया। उस समय कई विद्यार्थी उनके पास आकर कहने लगे-भविष्य के साथ अहित कर रहे हैं। बेटा! क्या बात हो गई, बताओ तो? छात्र ने कहा-

आप सब कुछ का विरोध करें- कर सकते हैं पर शिक्षण का तो विरोध मत करो। बापू जी ने कहा-बिल्कुल ठीक है। लेकिन हम शिक्षण का विरोध तो नहीं करते।

वह लड़का कहता है- मेरी समझ में नहीं आ रहा, आप हमें घुमाना चाह रहे हैं? घुमाना नहीं चाह रहा हूँ बेटा! मैं यह कहना चाहता हूँ कि शिक्षण होना चाहिए और सभी को उससे लाभन्वित होना चाहिए, शिक्षित होना चाहिए। परन्तु शिक्षण की पद्धति भी तो सही-सही होना चाहिए। जैसे हम दूध पी रहे हैं, लेकिन दूध पीते हुए शीशी में पी रहे हैं। भारतीय सभ्यता शीशी से दूध पीने की नहीं है। शीशी भी ऊपर से बिल्कुल काली है, जिसमें पता भी नहीं चले कि दूध है या और कुछ भी। एक तो शीशी में तथा दूसरे काले रंग वाली शीशी में और ऊपर से शराब की दुकान पर बैठकर पी रहे हैं। मुझे ऐसा लगा, गांधी जी ने बहुत चतुराई से काम लिया। **उन्होंने शिक्षण का विरोध नहीं किया किन्तु शिक्षण प्रणाली का विरोध किया है।** इसमें रहस्य यही है कि हम जिस शिक्षण प्रणाली से शिक्षा लेंगे तो आपके विचार भी तदनुसार ही होंगे, इसे कोई अस्वीकार नहीं कर सकता है। इसी प्रकार यदि आपके हाथ में शीशी है वह भी काली, और उसमें रखा दूध आप शराब की दुकान पर से पी रहे हैं, तो एक भी व्यक्ति ऐसा न होगा जो कि देखकर आपको शराबी न समझे। इसलिए दूध को दूध के रूप में पिओ, भले ही दिखाकर पिओ, कि देखो दूध पी रहा हूँ। इसी तरह वस्तु-विज्ञान को दिखाओ पर दूसरों को विचलित न होने दो। जो वस्तु दिखा रहे हैं वह सत्ता के माध्यम से नहीं किन्तु आगम की पद्धति के अनुसार दिखाना चाहिए। इस प्रकार दिखाने से सामने वाले व्यक्ति का जो उपयोग है वह केन्द्रित होगा और उसका विश्वास हमारे ऊपर शीघ्र तथा ज्यादा होगा। वात्सल्य-प्रेम बढ़ेगा। यदि हठात् कहने लग जाएंगे तो एक भी बात मानने वाला नहीं होगा। अत: हमें जो शंका है उसे आगम के अनुरूप ही समाधान करके धारणा बनानी चाहिए।

धवला, जयधवला, महाबन्ध में आचार्यों ने कहा है कि श्रावकों का क्या कर्त्तव्य होना चाहिए- **''दाणं पूया सीलमुववासो''**। जयधवला को सिद्धान्त ग्रन्थ माना जाता है जिसे भगवद्‌गुणधर स्वामी ने लिखा है जिसकी टीका वीरसेन स्वामी ने की है उसमें उन्होंने श्रावक के चार आवश्यक धर्म बतलाये हैं। आवश्यकों को उन्होंने धर्म संज्ञा दी है। **जो व्यक्ति दान को, पूजा को, शील को उपवास को जड़ की क्रिया कहेगा तो उसके उस उपदेश से सारी की सारी जनता विमुख हो जाएगी। क्योंकि यह उपदेश प्रणाली ही आगम से उल्टी है। यह जड़ की क्रिया नहीं है, यह धर्म की क्रिया है।** वस्तुभूत जो धर्म है, **वत्थुसहावो धम्मो** उस धर्म को प्राप्त करने के लिए श्रावकों के लिय चार आवश्यकों का मार्ग ही सही प्रणाली- पद्धति है। यही भगवान् का संदेश और आज्ञा भी है। **जो व्यक्ति आज्ञा का उल्टा प्रयोग करके केवल बन्ध के कारणों में इन धर्मों को गिनाता है, इसके द्वारा संवर निर्जरा नहीं मानता, वह अपने व्याख्यान से जिनवाणी का-धर्म का अवर्णवाद कर रहा है।**

यह वाक्य मेरे नहीं हैं। मैं तो केवल एक प्रकार का एजेन्ट हूँ। एजेन्ट का काम होता है कि सही-सही वस्तु का प्रसार करना। एक दुकान से दूसरी दुकान में पूरी-पूरी ईमानदारी के साथ दिखाओ। फिर भले ही कोई उस वस्तु को अच्छा कहे या बुरा। अच्छा कहे तो भी वस्तु वही है तथा बुरा कहने पर भी वही है। उसको तो दिखाने का वेतन कम्पनी से मिल ही रहा है, उसमें कोई बाधा नहीं। इसी प्रकार मुझे भी अरहन्त भगवान की तरफ से

(कर्मनिर्जरा और पुण्यवर्धन रूप) वेतन मिल रहा है। इसलिए इस प्रकार के व्याख्यान जब तक हम समाज के सामने नहीं रखेंगे तब तक सही-सही स्वाध्याय की प्रणाली आने वाली नहीं है, नहीं है, नहीं है। यह करना हमारा कर्त्तव्य है इसलिए इसे करना भी आवश्यक समझता हूँ समय-समय पर।

आज हम देख रहे हैं कि स्वाध्याय करते हुए भी जिस व्यक्ति के कदम आगे (चारित्र की ओर) नहीं बढ़ रहे हैं, उसका अर्थ यही है कि उसे स्वाध्याय करना तो सिखा दिया है, किन्तु भीतरी अर्थ, जो वस्तुतत्त्व था, उसमें उसे अपरिचित रखा है। उसको अंधेरे में रखा है। जो व्यक्ति वस्तुतत्त्व को अंधेरे में रखता है, वह व्यक्ति स्वयं भी खाली हाथ रह जाता है। और दूसरे को भी खाली हाथ भेजता है- घुमाता रहता है। लेकिन हमारी (जिनवाणी की) दुकान ऐसी नहीं है। हम भी नीची दुकान-मकान रखते हैं परन्तु ऊँचे पकवान् रखते हैं। ''ऊँची दुकान फीके पकवान'' यहाँ नहीं मिलेंगे।

''**वक्तृप्रामाण्याद्वचनप्रमाण्यम्**''- वक्ता की प्रमाणता से वचन प्रामाणिक होते हैं। कारण कि वक्ता यद्वा-कद्वा नहीं कह सकेगा। उसके पास किसी प्रकार का पक्षपात नहीं हुआ करता। एजेन्ट जो होता है वह किसी प्रकार से कम-वेशी दाम नहीं बताता। जिसको लेना हो लो, नहीं लेना हो न लो। इससे उसे कोई फर्क नहीं पड़ता। लोग पूछते हैं हम नहीं लेंगे तो तुम्हारा काम कैसे चलेगा? वह कहता है कि हमारी दुकान कम्पनी बहुत बड़ी है। जिसमें बिना काम के भी काम चलता है। कभी कम्पनी फेल होने की सम्भावना भी नहीं। ध्यान रखना, लौकिक कम्पनियाँ फेल हो सकती हैं पर वीतराग भगवान् की कम्पनी तीनकाल में फेल नहीं हो सकती। इसलिए मैंने तो भैय्या ऐसी कम्पनी में नौकरी ली है कि, जितना हम काम करेंगे उतना (कर्म निर्जरा व पुण्यवर्धन रूप) दाम मुझे आयु के अन्त तक मिलता रहेगा।

अब हमें अपने जीवन की आजीविका की कोई चिन्ता नहीं। **आचार्यों ने कहा है जिस चतुर वक्ता की आजीविका श्रोताओं के ऊपर निर्धारित है वह वक्ता वस्तुतत्त्व का प्रतिपादन ठीक-ठीक नहीं कर सकता है।** उन्होंने कहा है- ''क्रोधलोभभीरुत्वहारस्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पंच''। वक्ता से पहले श्रोता को जान लेना चाहिए कि वक्ता कैसा-कौन है। जैसा पण्डित जी ने अभी कहा था- किसका लेख है यह, किसका प्रवचन है? यह ठीक-ठीक जान लेना आवश्यक है। यदि पाठक कुछ भी नहीं जानता और लेखक ठीक है तो वह सब कुछ मानने को तैयार है। नहीं तो वह मानने के लिए तैयार नहीं होगा। **सिद्धान्त कभी वक्ता के घर का नहीं चलता। जैसे घर की दुकान हो सकती है, लेकिन नाप-तौल के मापक घर के नहीं हो सकते।** क्यों भैय्या दुकानदारो! दुकानदार का मतलब है, दो कान वाले। दो कान वाले दुकानदारो! हम पूछना चाहते हैं कि माल आपका, दुकान आपकी, सब कुछ आपका, किन्तु नाप-तौल भी आपका हो तो? पकड़े जाओगे। सब कुछ आपका हो सकता है पर नाप-तौल तो शासकीय ही होगा।

इसी प्रकार प्रवचन आप कर सकते हैं ग्रन्थ भी प्रकाशित कर सकते हैं। परन्तु घर का लिखा ग्रन्थ प्रकाशित नहीं कर सकते। आचार्यों के ग्रन्थों का सम्पादन/प्रकाशन करने वालों से हम यह कहना चाहते हैं कि वे ऐसा प्रकाशन करें, ऐसे सम्पादकों को रखें, अनुवादकों को रखें, जो जनसेवी हो और निर्भीक भी हों। विद्वानों के बिना यह काम सही-सही नहीं हो सकता, पर वे भी वेतन पर तुलने वाले नहीं होना चाहिए। कितने ही कष्ट

आ जायें फिर भी वह इधर का डंडा (मात्रा) उधर लगाने की मंजूर न करता हो। इतना संयत हो।

वक्ता की परिभाषा करते हुए आचार्यों ने कहा है कि- **वक्ता निरीह हो, वीतरागी हो, पक्षपाती न हो, किसी प्रकार से -प्रलोभन से उलट-पलट करने को तैयार न हो। वह होता है वक्ता।**

एक वकील होता है ओर एक जज (न्यायाधीश) हुआ करता है। दोनों एल.एल.बी हुआ करते हैं, किन्तु जजमेन्ट वकील नहीं दे सकता। जजमेन्ट जज का ही माना जाता है। एक बार ही दिया जाता है उसमें फिर हेर-फेर नहीं होता। चाहे अपील करें दूसरी अदालत में, यह दूसरी बात है। अदालत में एक बार लिख दिया जज ने, सो लिख दिया। लेकिन वकीलों की स्थिति वह नहीं हुआ करती, उसके तो एक रात में हजारों ''प्वाइन्ट'' बदल जाते हैं। आज जज की बड़ी आवश्यकता है, वकीलों की नहीं। वकील को पेशी पर जाना पड़ता है अत: पेशी कहलाती है। परन्तु जज की पेशी नहीं हुआ करती। कोर्ट में जज के सामने राष्ट्रपति को भी यूँ (झुकना) पड़ता है। इसी तरह सिद्धान्त के सामने सबको झुकना पड़ता है। तीर्थंकर भी नमोऽस्तु करते हैं। जो वस्तुतत्त्व जैसा है, जिस रूप में है, वही सिद्धान्त है उसी को नमस्कार करना पड़ता है। अरहन्त परमेष्ठी को भी नमस्कार नहीं करना होता है, आचार्य को भी नहीं, साधु को भी नहीं, लेकिन वस्तुस्वरूप में अवस्थित सिद्धपरमेष्ठी को उन्हें भी (तीर्थकरों को) नमस्कार करना पड़ता है। अर्थात् तीर्थंकर उस (सिद्धालय रूपी) हाईकोर्ट को नमोऽस्तु करते हैं जिससे ऊपर कोई नहीं। जिसके कोर्ट में कालिमा नहीं है। जज कैसे कपड़े पहनते हैं? फक-सफेद। और वकील? काला कोट पहनते हैं भैय्या! इसलिए उनकी आज्ञा नहीं मानी जाती। जज की बात मानना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। इसी तरह सिद्धरूप शुद्धतत्त्व की बात मानने में हमारा कल्याण होगा, वीतरागी की बात मानने में कल्याण होगा, अन्य की में नहीं। बिना माने हमारा कल्याण संभव नहीं। यह सब हमारे आचार्यों ने कहा है, उसी तत्त्व तक ले जाने की बात उन्होंने की है।

बन्धुओ! हमें शब्दों की ओर से भीतरी अर्थ की ओर झुकना है। कहाँ तक कहूँ कहा नहीं जाता। इन महान् आचार्यों के हमारे ऊपर बहुत उपकार हैं। हम उनका ऋण तभी चुका सकते हैं जब हम उनके कहे अनुसार (जैसा कहा वैसा) बनने का प्रयास करेंगे। कुन्दकुन्ददेव के समान तो नहीं चल सकते और उस प्रकार चलने का विचार भी शायद नहीं कर सकते, यह माना जा सकता है परन्तु उनका कहना है कि बेटा! जितनी तुम्हारी शक्ति है उतनी शक्ति भर तो 28 मूलगुणों को धारण कर। उसमें यदि कमी नहीं करेगा तो मैं तुमसे बहुत प्रसन्न होऊंगा। तेरा उद्धार हो जाएगा, ऐसा समझो। तत्त्वार्थसूत्र में एक सूत्र आता है- **''परस्परोपग्रहो जीवानाम्''** इसकी व्याख्या करते हुए कहा गया है कि गुरु-शिष्य के ऊपर उपकार करता है और शिष्य गुरु के ऊपर। मालिक मुनीम के ऊपर उपकार करता है और मुनीम मालिक के ऊपर। शिष्य-गुरु से पूछता है कि हमारा उपकार आपके ऊपर कैसे हो सकता है? यह तो आपका ही उपकार मेरे ऊपर है जो कृपा की। तब आचार्य जबाव देते हैं कि गुरु का उपकार शिष्य को दीक्षा-शिक्षा देने में है और शिष्य का उपकार गुरु द्वारा जो बताया गया है उस पर चलने में होता है। इसी तरह मुनीम का भी। जब तक उनके अनुसार नहीं चलेंगे तब तक हम अपने बाप-दादाओं के, अपने गुरुओं के द्वारा किये उपकार को नहीं समझ सकते तथा उनके उपकार को प्रत्युपकार के रूप में सामने लाना है, नहीं तो हम सपूत नहीं कहलायेंगे।

''पूत के लक्षण पालने में'' सब लोग इस कहावत को जानते हैं। शब्दों की गहराई में आप चले जाइये

और वस्तुत: शब्दों की गहराई में चले जाएं तब कहीं जाकर अर्थ को पा सकेंगे। पूत का लक्षण है, माता-पिता-गुरु की आज्ञा को पालने का। जो लड़का/पूत माता-पिता-गुरु की आज्ञा का पालन नहीं करता वह, तीनकाल में भी सपूत नहीं कहलायेगा। कहावत है- **''पूत कपूत तो का संचय और पूत सपूत तो का धन संचय''**। अर्थ यही हुआ सपूत को कुल का दीपक माना गया है। देश की, वंश की, कुल की, परम्परा में जो चार चांद लगा देता है वही सपूत है। हम अपने आपसे पूछ लें कि हम अरहन्त भगवन के पूत हैं, सपूत हैं या....। कहने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि हम उनकी आज्ञा का यथासंभव पालन कर रहे हैं, जो हमारा कर्तव्य है, हम जिस तरफ भी कदम बढ़ायें, यदि माता-पिता-गुरुओं का वरदहस्त हमारे ऊपर रहेगा तो हम उस ओर आबाधित बढ़ते जायेंगे।

आज 12-13 साल हो गये, मालूम नहीं चला, कोई बाधा नहीं। पूज्य गुरुवर आचार्यश्री ज्ञानसागरजी महाराज का वरदहस्त सदा साथ रहा। और उनके ऊपर रहने वाले अनेक महान आचार्यों के वरदहस्त भी साथ हैं, ऊपर हैं।

घबड़ाना नहीं, जिस समय चक्रवात चलता है तो नाव आगे नहीं बढ़ती और पीछे भी नहीं जाती। तब ताकत के साथ स्थिर रखना होती है हमें नाम नहीं करना जोरदार, काम जोरदार करना है। हमें अपनी नाव मजबूत रखना है, उसे चक्रवात से हटा के अलग नहीं करना है क्योंकि नाव की शोभा पानी में ही है। तथा उसको निश्छिद्र रखना है। जिस समय किसी छिद्र के द्वारा नाव में पानी आ जाएगा तो नाव डूब जाएगी। **हमें कागज की नावों में नहीं चलना है। कागजी नाव के स्थान पर चुनाव हावी होता जा रहा है, हमें अपने जीवन की नाव की भव-समुद्र में आये चक्रवात से रक्षा करके उस पार तक ले जाना है जहाँ तक अन्तिम मंजिल है।**

आज ऋषभनाथ जी महाराज आहार के लिये उठेंगे। आप सभी नवधा भक्ति से खड़े होइये। 10 भक्ति या 8 भक्ति नहीं करना है। नवधा-भक्ति ही जब पूरी-पूरी होगी तभी वे आहार ग्रहण करेंगे। आज हमें उनके माध्यम से दान की क्रिया, ज्ञान की क्रिया समझनी है, जो वस्तुत: भीतरी आत्मा के प्राप्त करने की एक प्रणाली है। दिगम्बर चर्या खेल नहीं है। बन्धुओ! **आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने इस चर्या के लिए महान् से महानतम उपमाएं दी हैं- यही प्रबज्या है, यही श्रमणत्व है, यही जिनत्व है, यही चैत्य है, यही चैत्यालय है, यही जिनागम है, यही सर्वस्व है, यही चलते-फिरते सिद्धों के रूप हैं। केवल ऊपर शरीर रह गया है, भीतर आत्मा वही है, जैसी कुन्दकुन्ददेव की है जैसी सिद्ध भगवान की है।** कहाँ तक कहा जाए। यह पथ, यह चर्या ऐसी है, जिसका स्थान कभी भी आंका नहीं जा सकता। अनमोल है यह चर्या, यह व्रत जो आज भी दिगम्बर सन्त पाल रहे हैं। अन्त में आचार्य ज्ञानसागरजी को स्मरणपथ पर लाकर यह व्याख्यान समाप्त करता हूँ।

तरणि ज्ञानसागर गुरो! तारो मुझे ऋषीश।
करुणाकर करुणा करो, कर से दो आशीष॥

(केसली 10-3-86 कैवल्यलब्धिदिवस पूर्वबेला)

निरन्तर.....

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

शान्तिर्जिनो मे भगवान् शरण्यः।

गतांक से आगे.....

सत्पथ-दर्पण

स्व. पं. अजित कुमार शास्त्री
(पूर्व जैनगजट संपादक)

अन्तिम-निवेदन

इस समय केवल-ज्ञानी, मन:पर्ययज्ञानी, अवधिज्ञानी, श्रुतकेवली तथा अन्य किसी विशेष ज्ञान-ऋद्धि-धारक ज्ञानी का सद्‌भाव नहीं है, जिसके समक्ष जाकर किसी बात का निर्णय किया जा सके। इस समय तो हमारे सामने आर्ष ग्रन्थों के रूप में जिनवाणी ही उपलब्ध है। अत: हमको अपनी श्रद्धा, ज्ञान और आचार जिनवाणी के अनुसार बनाना चाहिए।

जिनवाणी प्रथमानुयोग, करणानुयोग चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग के रूप में निबद्ध की गई है। जिनवाणी के श्रद्धालु को चारों अनुयोगों का स्वाध्याय करके ज्ञान -साधना करनी चाहिये, तभी जिनवाणी का रहस्य प्राप्त किया जा सकता है।

श्री कहान भाई ने जो अपने जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन किया है, उस आध्यात्मिक परिवर्तन को उन्हें चारों अनुयोगों के ग्रन्थों के मार्मिक स्वाध्याय द्वारा सफल करना चाहिये। द्रव्यानुयोग का रहस्य करणानुयोग का ज्ञान प्राप्त किये बिना प्राप्त नहीं होता। श्री कहान भाई ने जो अपने प्रवचन और ग्रन्थों के निर्माण में मोटी-मोटी सैद्धान्तिक गलतियां की हैँ, उसका मूल कारण यह प्रतीत होता है कि उन्होंने गोम्मटसार आदि ग्रन्थों का गम्भीर अध्ययन नहीं किया।

इसी कारण वे शुद्ध आत्म-तत्त्व का निरूपण तो करते हैं, किन्तु यह नहीं बतलाते कि आत्मा शुद्ध होता किस तरह है, कैसे परिणाम आत्मा को कितना शुद्ध करते हैं, बहिरात्मा से अन्तरात्मा कैसे बनता है और अन्तरात्मा से परमात्मा कैसे हुआ करता है; सम्यक्त्व से आत्मा की कितनी शुद्धि होती है, और चारित्र से कितनी होती है, कर्मों का संवर और अविपाक-निर्जरा किस गुण-स्थान से आरम्भ होती है और किस किस गुण-स्थान में वह संवर, निर्जरा की मात्रा कितनी-कितनी बढ़ती जाती है, संवर और निर्जरा की हानि वृद्धि का कारण क्या है कर्मों का आस्रव, बन्ध, सत्व, उदय किस-किस गुण-स्थान में कितना होता है?

इन बातों को बिना अच्छी तरह जाने समझे और बिना बतलाये आत्मा शुद्ध न तो किया जा सकता है और न कराया जा सकता है।

जैसे अपने मैले कपड़े के विषय में यों कहें कि "**हमारा वस्त्र तो निर्मल स्वच्छ है, उसमें रंच-मात्र भी मैल नहीं है। हमें तो उसकी निर्मल स्वच्छता दिखाई दे रही है। वस्त्र का परिणमन वस्त्र में है, मैल का परिणमन मैल में है। पर-पदार्थ मैल हमारे वस्त्र की स्वच्छता को नहीं बिगाड़ सकता।**" इत्यादि बातों के कहने सुनने से वस्त्र साफ नहीं होता। उसके लिये तो जल और साबुन द्वारा साफ करने का परिश्रम करना पड़ता है।

इसी तरह आत्मा का कर्म मल, केवल आत्मा को शुद्ध-बुद्ध-सिद्ध समझ लेने मात्र से या मधु वाणी में कह देने मात्र से दूर नहीं हो जाता, उसके लिये यथाविधि कुछ तप त्याग संयम का श्रम भी करना पड़ता है, विषय-भोगों का सम्पर्क छोड़ना पड़ता है, मन वचन शरीर की प्रवृत्ति बदलनी पड़ती है, आत्म-ध्यान का अभ्यास करना पड़ता है। जैसे कि सम्यग्दृष्टि, महान् ज्ञानी तीर्थंकरों ने किया। केवल चर्चा करने से कुछ नहीं बनता। प्रथमानुयोग का स्वाध्याय किये बिना आत्म-शोधन की क्रियात्मक (अमली प्रैक्टीकल) प्रक्रिया नहीं मालूम हो सकती।

ज्ञान का संचय

साँस के लिए स्वच्छ वायु लेने के लिये तथा दूषित वायु अपने घर में से या कमरे में से बाहर निकालने के लिये कमरे की खिड़कियों को तथा प्रकाशदानों (रोशनदानों) को खुला रखना चाहिये। जो मनुष्य कमरे या मकान की खिड़कियों तथा प्रकाशदानों (रोशनदानों) को बंद रखते हैं, वे कभी स्वस्थ नहीं रह सकते।

एक इसी तरह बुद्धिमान पुरुष को ज्ञान के कण संचित करने के लिये मस्तिष्क (दिमाग) की खिड़कियाँ भी खुली रखनी चाहिए जिससे भंडार में वृद्धि होती रहे। जो मनुष्य अपने दिमाग की खिड़कियां बंद कर लेते हैं वे अपने ज्ञान को परिष्कृत नहीं कर सकते।

कहानपंथ के नेता केवल द्रव्यानुयोग का स्वाध्याय करते हैं वे अपने मस्तिष्क की खिड़कियां प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग के बन्द किये रहते हैं, इसी कारण प्रतीत होता है कि उन का आध्यात्मिक-ज्ञान अधूरा यानी एकान्त-पक्षी बन गया है। निश्चय नय के होकर भी वे निश्चय नय को भी आलाप-पद्धति आदि ग्रन्थों के स्वाध्याय किये बिना अभी तक ठीक नहीं समझ पाये, गुण-स्थानों को नहीं जान पाये एवं निश्चय और व्यवहार धर्म या रत्नत्रय को नहीं जान पाये, जैसा कि उनके द्वारा निर्मित एवं प्रकाशित ग्रन्थों से प्रगट होता है छहढाला, द्रव्यसंग्रह- जैसे ग्रन्थों की कहानपंथ टीका इसका स्पष्ट उदाहरण है। मूलग्रन्थ कुछ कहता है तो उसकी कहानपंथ टीका कुछ कहती है।

समयसार की श्री अमृतचन्द्र सूरि कृत तथा श्री जयसेन आचार्य टीका कुछ कहती है और कहानपंथ से प्रकाशित समयसार प्रवचन कुछ कहता है।

सैद्धान्तिक विवाद इसी एकाङ्गी (केवल द्रव्यानुयोग के) स्वाध्याय फल है। यदि समस्त अनुयोगों का स्वाध्याय, मनन, चिन्तन हो तो एक ही आम्नाय के व्यक्तियों में परस्पर सैद्धान्तिक विवाद हो नहीं सकता।

अनुयायी वर्ग

कहानपंथ के अनुयायी वर्ग ने अपना सुन्दर नाम 'मुमुक्षु' रक्खा अवश्य है परन्तु मुक्त होने के लिये जो चारों अनुयोगों का ज्ञान-अर्जन करने के लिये प्रयास होना चाहिए, तो उन्होंने भी नहीं किया। 'द्रव्यानुयोग के सिवाय अन्य अनुयोगों के ज्ञानकण कहीं उनके हृदय में न घुस आवें'' इस आशंका से उन्होंने अन्य तीन अनुयोगों के लिये अपने हृदय के बज्र कपाट बन्द कर लिये हैं। वे द्रव्यानुयोग के सिवाय अन्य किसी अनुयोग का स्वाध्याय करते ही नहीं।

उनसे यदि गुणस्थानों के विषय में, नयों के विषय में या कर्मों के बन्ध, उदय, सत्व, संक्रमण, उदीरणा,

संवर, निर्जरा आदि के विषय में पूछो तो लगभग 99 प्रतिशत मुमुक्षु सज्जनों का यही एक उत्तर होता है कि **'हमने तो आत्मा को समझना है, अन्य बातों से हमें क्या प्रयोजन।'**

ऐसी दशा में वे क्या तो समयसार समझेंगे और क्या आत्मा को समझेंगे। जिस व्यक्ति ने अपने वस्त्र का मैल, मैल का कारण तथा मैल छूटने की विधि और उसका प्रयोग न समझा, भला वह वस्त्र को क्या साफ कर सकेगा।

वे अपने स्वाध्याय में जब तक सिवाय गलत कहानपंथ साहित्य के अन्य आर्ष ग्रन्थों को नहीं लेंगे तब तक वे एकान्तवादी धारणा से छूट कर अनेकान्तवाद में कैसे आ सकते हैं?

इन्दौर आदि विभिन्न स्थानों पर समाज में परस्पर तनाव उत्पन्न होने का मूल कारण केवल यह है कि मुमुक्षु भाई कहानपंथ साहित्य के साथ अन्य कोई भी आर्ष ग्रन्थ नहीं पढ़ना चाहते। जबकि जनता सभी अनुयोगों का स्वाध्याय चाहती है।

कहानपंथ ग्रन्थों में दिगम्बर मुनियों की अश्रव्य (न सुनने योग्य) निन्दा भी अनेक स्थलों पर विभिन्न रूप से लिखी हुई है। (उसका उल्लेख करके हम जनता की भावना को भड़काना उचित नहीं समझते।) यह बात भी सामाजिक विवाद की कारण बन जाती है।

अनुचित प्रणाली

चारित्र मोहनीय कर्म का जब तक उदय रहता है तब तक प्रत्येक जीव के अनेक प्रकार की इच्छाएँ हुआ करती हैं। उन इच्छाओं में से एक इच्छा यशो-लिप्सा यानी- यश कीर्ति प्राप्त करने की आकांक्षा भी है। यश प्राप्त करने की तीव्र इच्छा धार्मिक या आध्यात्मिक महानुभावों के भी होती है। क्योंकि वे भी तो रागी मोही होते हैं। इसलिये अध्यात्म-प्रेमी व्यक्ति भी अपने यश-कीर्ति के प्रसार के लिये कृत, कारित, अनुमोदना के रूप में विविध कार्य रुचि के साथ करते हैं। इस यशो-लिप्सा पर विजय प्राप्त करने वाला कोई विरला ही उच्चकोटि का महात्मा होता है।

परन्तु तत्त्वेत्ता, अध्यात्म-प्रेमी धर्मात्मा को यह ध्यान रखना आवश्यक है कि वह अपना यश फैलाने की इच्छा से कोई ऐसा कार्य न करे और न अपने अनुयायियों द्वारा अपने लिये होने दे जिससे मिथ्या प्रवृत्ति चल पड़े।

कहानपंथ में कुछ ऐसी प्रवृत्तियाँ जड़ जमाती जा रही हैं जिन्हें कहानपंथ के नेताओं को कड़ाई से साथ रोक देना चाहिये।

असत्य वार्ता

राजकोट के श्री ब्र. चुन्नीलाल जी देसाई ने अपनी पुस्तक (कहानपंथ का कलंक) में, श्री पं. सरनाराम जी ने अपने लेख में तथा श्री कहान भजन मजरी पुस्तक में चंपकलाल मोहन डगली ने यह अभिप्राय लिखा है कि-

''श्री कहान भाई पूर्व भव में विदेश क्षेत्र में एक राजा राजकुमार थे। उन्होंने अपनी पत्नी के साथ श्री 1008 सीमन्धर तीर्थंकर का दर्शन समवशरण में जाकर उस समय किया था जब श्री कुन्दकुन्द

आचार्य वहाँ गये थे।''

कहानपंथ के नेताओं तथा श्री कहान भाई की ओर से इस बात का निराकरण नहीं किया गया, इससे प्रतीत होता है कि 'मौनं सम्मतिलक्षणम्' नीति के अनुसार आप इस बात से सहमत हैं। किसी के पूर्वभव की बात कोई अन्य व्यक्ति कह भी नहीं सकता, अत: संभव है कि, यह बात श्री कहान भाई ने ही कही होगी। जैसा कि पं. सरनारामजी ने लिखा भी है।

परन्तु यह बात असंगत है। विदेह क्षेत्र में भाग्यशाली मनुष्यों की एक कोटि पूर्व की (अरबों वर्ष की) आयु होती है। तदनुसार श्री कुन्दकुन्द आचार्य के समय अनुसार युवक राजकुमार दो हजार वर्ष पीछे ही विदेह क्षेत्र से चय कर श्री कहान भाई के रूप में कैसे उत्पन्न हो सकता है? अकालमृत्यु की घटना से ही ऐसा होना सम्भव है।

विदेह क्षेत्र का वह राजकुमार सम्यग्दृष्टि न होगा, अन्यथा वह मनुष्य आयु का बन्ध करके श्री कहान भाई के रूप में कैसे उत्पन्न होता। सम्यक्त्वी मनुष्य के तो देव आयु का बन्ध होता है।

विदेह क्षेत्र का भाग्यशाली मनुष्य यदि मनुष्य भी होता, तो विदेह में तो जन्म लेता जिससे उसी भव से उसको मुक्ति प्राप्त करने के साधन सुलभ होते तथा साक्षात् तीर्थंकर के दर्शन करने का अवसर मिलता रहता।

इत्यादि, सिद्धान्त की छाया में यह बात गलत सिद्ध होती है।

कलिकाल में उत्पन्न हुआ भरत क्षेत्र का कोई व्यक्ति विदेह क्षेत्र में जन्म ले, यह तो उसके अभ्युदय (उन्नति) और नि:श्रेयस (कल्याण) का चिन्ह है किन्तु विदेह क्षेत्र का राजकुमार कलिकाल में भरतक्षेत्र में उत्पन्न हो, यह उन्नति और कल्याण का चिन्ह नहीं। श्री कहान भाई को जनता की यह गलत धारणा दूर कर देनी चाहिये।

चित्र की पूजा

बम्बई के मन्दिर में श्री कहान भाई का एक बड़ा चित्र एक अलग वेदी में विराजमान है। मन्दिर में दर्शन करने के लिए आने वाले भक्त स्त्री-पुरुष उस चित्र को अर्हन्त भगवान के समान साष्टांग नमस्कार करते हैं, उस चित्र की आरती उतारते हैं। जब श्री कहान भाई व्रती भी नहीं हैं, अव्रती हैं, तब उनके चित्र की इस तरह पूजा, भक्ति की जानी बहुत अनुचित है। श्री कहान भाई को यह गलत पद्धति तत्काल रोक देनी चाहिये।

मानस्तम्भ में मूर्ति

समवशरण की अनुकृति रूप में मन्दिर का निर्माण किया जाता है और समवशरण बहिर्भाग में बने हुए मानस्तम्भ में अर्हन्त भगवान की प्रतिमा विराजमान की जाती है। परन्तु श्री कहान भाई के भक्त मानस्तम्भ में श्री कहान भाई की मूर्ति भी बना देते हैं। यदि कहान भाई महाव्रती मुनि होते तब तो उनकी मूर्ति दिगम्बर आम्नाय का बोध कराने वाली होती। परन्तु वे वस्त्रधारक अव्रती के रूप में हैं, तो उनकी वस्त्रधारिणी मूर्ति से श्री कुन्दकुन्द आचार्य के निर्ग्रंथ जिनेन्द्र रूप का घात होता है। यह बात इस समय साधारण प्रतीत होती है परन्तु कालान्तर में बहुत हानि-प्रद सिद्ध होगी। श्री कहान भाई तो सदा न बने रहेंगे (हमारी तो भावना है कि वे चिरायु हों) परन्तु उनके अभाव में मानस्तम्भ में उत्कीर्ण उनकी प्रतिमा उनके दिगम्बरीय मान्यता या चिन्ह का बोध न

करा सकेगी। इस पर कहान भाई गम्भीरता से विचार करें।

पागले

श्री कहान भाई एक ओर तो शुद्ध सम्यग्दर्शन को ही उपादेय बताकर व्यवहार रत्नत्रय को भी त्याज्य बताते हैं। देवमूढ़ता, गुरु मूढ़ता और लोक मूढ़ता को बड़ी दृढ़ता से निषेध करते हैं, किन्तु उधर उनके आश्रय से मिथ्यात्व का प्रचार भी हो रहा है, यह एक विचित्र बात है। यह बात अनेक बार प्रकाशित हुई है कि श्री कहान भाई के चरणों के तलवों पर केसर लगाकर उनके भक्त जन वस्त्रों पर उन चरणों-चिन्हों की छाप (पागले) ले लेते हैं। उन पागलों को वे अपने घरों में इस मान्यता से ऊँचा टाँग देते हैं कि इनके निमित्त से लक्ष्मी, स्वास्थ्य, सुख, सुविधा का समागम होगा।

क्या यह प्रथा और मान्यता लोकमूढ़ता अथवा गुरुमूढ़ता की प्रतीक नहीं है? श्री कहान भाई गम्भीरता से विचार करें।

तीर्थङ्कर का अवतार

श्री कहान भाई की 74 वीं वर्षगाठ पर श्री ब्रजलाल फूलचन्द्र भायाणी (सौराष्ट्र) द्वारा प्रकाशित 'कहान भजन मंजरी' (प्रथम पुष्प) पुस्तक में पृष्ठ 10 तथा पृष्ठ 17 पर श्री कहान भाई को 'तीर्थंकर' बतलाया गया है। पृष्ठ 9 पर श्री कहान भाई को 'केवल ज्ञान का टुकड़ा' लिखा है।

क्या कहानपंथ के नेताओं को तथा स्वयं श्री कहान भाई को अपने लिए प्रयुक्त ये विशेषण उचित प्रतीत होते हैं? गहराई से विचार करें।

ये बाते जनता में मिथ्या प्रवृत्ति (मिथ्यात्व) फैलाने वाली है, अत: इनका कड़ाई के साथ निराकरण होना चाहिए।

विद्वानों का कर्त्तव्य

विद्वान् सदा सरस्वती का उपासक रहा है। लोक में सरस्वती का गहन नीर क्षीर का विवेक करने वाले 'हंस' को माना गया है। तदनुसार विद्वानों को सरस्वती माता (जिनवाणी) का हृदय से सम्मान करके उससे विमुख कोई वार्ता न करनी चाहिए। चारों अनुयोगों का रूप धारण करने वाली जिनवाणी 'सर्वाङ्ग सुन्दरी बनी रहे, उसका कोई अंग-भंग न होने पावे', इसका उत्तरदायित्व विद्वानों पर है, उसका निर्वाह प्रत्येक जैन विद्वान को शुद्ध हृदय से करना चाहिये।

''आत्मा के अभ्युदय के लिये चारित्र का आचरण भी अनिवार्य आवश्यक है, निश्चय-व्यवहार-आत्म-परिणति साध्य-साधन रूप है, विचार-धारा अनेकान्तमयी सत्य है, एकान्त-पोषिणी असत्य है, कार्य-सिद्धि उपादान तथा निमित्त दोनों प्रकार के कारणों से हुआ करती है कषायांश बन्ध का कारण है, व्रत तप संयम संवर निर्जरा का कारण है।'' इत्यादि विषय पर विद्वानों को गोम्मटसार, सर्वार्थसिद्धि, राजवर्तिक आदि ग्रन्थों के आधार से स्पष्ट विवेचन करना चाहिये।

जनता को असत् मार्ग से हटाकर जिनवाणी-सम्मत सत्पथ का प्रदर्शन करना विद्वानों का कर्त्तव्य है।

नीतिकार के विद्वान् को लक्ष्य करके कहा है-

नीरक्षीरविवेके हंसालस्यं त्वमेव कुरुषे चेत्।
विश्वस्मिन्नधुनान्यः कुलव्रतं पालयिष्यति कः॥

यानी- हे हंस! यदि तुम दूध और जल को अलग-अलग करने में आलस्य करोगे तो इस जगत में सत्य का भेदभाव कौन दिखलावेगा?

सद् गुरु

पंच-परमेष्ठी में प्रथम, द्वितीय पद आराध्य देवाधिदेव का है, जिनको अर्हन्त और सिद्ध माना जाता है। शेष तीन परमेष्ठी (आचार्य, उपाध्याय, साधु) धर्म-गुरु या सद्गुरु माने गये हैं।

प्रत्येक मुमुक्षु (मुक्ति-इच्छुक) के लिये अर्हन्त, सिद्ध का पद प्राप्त करना लक्ष्य होता है और गुरु उस लक्ष्य तक पहुँचाने वाला या पथ-प्रदर्शन करने वाला हुआ करता है। वह मुक्त-आत्माओं के पद-चिह्नों पर स्वयं चलता है, तथा अन्य भव्य प्राणियों को उस मार्ग पर चलने की प्रेरणा प्रदान करता है। अतएव उसे '**तरण तारण**' कहते हैं। संसार में रहते हुए भी वह संसार से पृथक् रहता है। वह जनता से अपने लिये कुछ नहीं लेता क्योंकि वह स्वयं नग्न दिगम्बर होता है, परन्तु अपनी प्रवृत्ति और प्रेरणा द्वारा जनता को महान आत्मवैभव प्रदान करता है। सत्श्रद्धा, सत्ज्ञान, सत् आचार की वह चलती फिरती प्रतिमा होता है। संसार, शरीर और विषयभोगों से विरक्त होता है। महान इन्द्रिय-विजेता, कषाय-जयी तथा शान्तिमूर्ति होता है।

ऐसा संसार का आदर्श महात्मा धर्मगुरु या सद्गुरु होता है। जिसके लिये श्री समन्तभद्र आचार्य ने लिखा है-

विषयाशावशातीतो निरारम्भोऽपरिग्रहः।
ज्ञानध्यानतपोरक्तस्तपस्वी सः प्रशस्यते॥

अर्थ- पांचों इन्द्रियों के विषयों की आशा से जो अतीत (रहित) हो, समस्त आरम्भ और अन्तरंग बहिरंग परिग्रह जिसके न हो और न जो किसी तरह का आरम्भ करता हो, जो आत्म-ध्यान तथा ज्ञान आराधन में लीन रहता हो, वह सद्गुरु तपस्वी है और प्रशंसनीय है।

हमारी भावना है कि श्री कहान भाई में ऐसे ही विश्वन्द्य निर्ग्रन्थ सद्गुरु का स्थान प्राप्त करें। जब आपने श्री 108 कुन्दकुन्द आचार्य में सत्श्रद्धा जाग्रत करके आत्म-अभ्युदय के लिये अपने जीवन में महान् क्रान्ति की है तो आपको श्री कुन्दकुन्द आचार्य के चरण-चिह्नों पर चलकर निर्ग्रंन्थ-मुनिचर्या भी करनी चाहिये। मनुष्य-जीवन की यह सबसे बड़ी सफलता है। आप इस मानुषीय परमपद का निर्वाह न कर सकते हों, ऐसी बात नहीं है, हृदय में दृढ़ भावना लाने की केवल आवश्यकता है। अपने शरीर से आत्म-साधना का यह कार्य आत्मतत्त्ववेत्ता को अवश्य लेना चाहिए।

यदि आप ऐसा न कर सकें तो कम से कम प्रतिज्ञापूर्वक सप्तम प्रतिमा का निर्दोष निरतिचार चारित्र यथाविधि स्वीकार करें।

उस दशा में महान गुरु-पद का प्रतीक 'सद्गुरु' विशेषण अपने नाम के साथ न लगावें, न अन्य व्यक्ति

के द्वारा लगने दें तथा सद्‌गुरु के नाम पर अपना जयघोष भी न कराया करें। ऐसा करना, कराना दर्शन मोहनीय कर्म के आस्रव का कारण गुरु का अवर्णवाद है। आप अपने भक्तों को ऐसा करने से नहीं रोकते हैँ इसका अर्थ तो यह है कि आपको अपनी ऐसी असत् प्रशंसा में रुचि है।

काल लब्धि

चारित्र पालन के लिये काल-लब्धि का यह बहाना करना; कि 'जब हमारे काल-लब्धि आवेगी, तब बिना कुछ प्रयत्न किये ही स्वयं हमारे संयम का आचरण हो जायगा,' आत्मार्थी सत्पुरुष के लिये अनुचित वार्ता है। इस तरह तो आप अपनी श्रद्धा में भी परिवर्तन न कर सकते थे।

उत्साह और साहस के साथ विवेकी पुरुष को 'शुभस्य शीघ्रम्' नीति अनुसार आचरण करने में देर न करनी चाहिये। काल-लब्धि तो उचित कारण-कलाप की योजना करने पर स्वयं आ जाती है। कायर लोग काल-लब्धि के दास बना करते हैं।

साहसी व्यक्ति काल-लब्धि को दासी बनाते हैं।

आशाय ये दासास्ते दासाः सर्वलोकस्य।
आशा येषां दासी तेषां दासायते लोकः॥

अर्थ- काललब्धि की आशा के जो दास होते हैं। वे समस्त जगत के दास होते हैं और जो आशा को अपनी दासी बना लेते हैं, सारा जगत उनका दास बन जाता है।

मुखपत्ती उतारते समय आपने काललब्धि की प्रतीक्षा नहीं की थी। आत्म-हितार्थी व्यक्ति आत्महित करने के लिये काल-लब्धि का मुखापेक्षी नहीं बनता। आप जब खाने, पीले पहनने ओढ़ने, आने-जाने बोलने-चालने, सोने, घूमने-फिरने आदि लौकिक कार्यों में काल-लब्धि की प्रतीक्षा नहीं करते तो संयम-आचरण में काल-लब्धि की प्रतीक्षा क्यों कर रहे हैं।

श्री पं. टोडरमल जी ने काल-लब्धि को फटकार अपने मोक्षमार्ग प्रकाशक ग्रन्थ में बतलाई है, उस पर विचार कीजिये।

शुभ कर्म के उदय से कार्य में सफलता मिलने के लिये अनुकूल सामग्री का मिलना ही काल-लब्धि है। सो आपको वैसी योग्यता प्राप्त है, गृहस्थाश्रम के बन्धन से भी आप अतीत हैं। इस काल-लब्धि का लाभ उठाकर आप महाव्रत धारी सद्‌गुरु बन सकते हैं।

मुनि का द्रव्य लिङ्ग भावलिङ्ग

युद्ध में विजय प्राप्त करने लिये योद्धा सैनिक के शरीर में बल तथा हृदय में वीरतामय अन्तरंग उत्साह होना तो परम आवश्यक है ही, उसके बिना तो वह अपने शत्रु पर विजय पा ही नहीं सकता। परन्तु इसके साथ ही उसकी बाहरी साधन-सामग्री होना भी अत्यन्त आवश्यक है। वीरता का उद्‌बोधक गणवेश (बर्दी) तथा बर्छी, तलवार, बन्दूक, गोली, बारूद आदि बाहरी सामान सिपाही के पास न हों तो उसका अन्तरङ्ग वीरभाव व्यर्थ हो जाता है, केवल उस अन्तङ्ग वीरता के कारण ही उसको युद्ध में विजय नहीं मिल सकती।

इसी तरह यदि अन्तरङ्ग में संसार, शरीर और भोगों से वैराग्य भावना हो किन्तु बाहर से सांसारिक

परिग्रह का, शारीरिक पोषण का पहनाव उढ़ाव का तथा इन्द्रिय-विषय-भोगों का परित्याग न किया हो तो वह हृदय की वैराग्य भावना स्थिर नहीं रहती लुप्त हो जाती है जैसे श्मशान भूमि में मनुष्यों का वैराग्य असफल रहता है।

यदि भगवान नेमिनाथ वस्त्र आभूषण आदि उतार कर मुनि दीक्षा ग्रहण न करते, तो कोरी वैराग्य-भावना से उनको आत्म-सिद्धि कदापि न मिलती।

मुनि का द्रव्य-लिंग (नग्न दिगम्बर वेश) धारण किये बिना कभी भाव-लिंग यानी-प्रत्याख्यानवरण कषाय के क्षयोपशम से होने वाला अन्तरंग मुनि चारित्र नहीं होता। द्रव्यलिंग होने पर भावलिंग कदाचित न भी हो, परन्तु भावलिंग तो द्रव्यलिंग के बिना कदापि (कभी भी) नहीं होता।

इसी कारण श्री कुन्दकुन्द आचार्य ने सूत्र पाहुड़ की 23 वी गाथा में स्पष्ट कहा है कि-

ण वि सिज्झइ वत्थधरो जिणसासण होई तित्थ्यरो।

अर्थ- वस्त्रादि बहिरंग परिग्रहधारी यदि तीर्थंकर भी हो तो भी वह आत्मसिद्धि (मुक्ति) प्राप्त नहीं कर सकता।

इस कारण यह खयाल करना मूलतः गलत है कि जब हमारे संयम घाती कषाय का क्षयोपशम होगा तब बाहरी परिग्रह का त्याग अपने आप हो जायेगा। क्योंकि एक तो बहिरंग परिग्रह के रहते हुए अन्तरंग परिग्रह का त्याग होता नहीं, बहिरंग परिग्रह के त्याग होने पर ही अंतरंग परिग्रह का त्याग होता है। जैसे चावल के ऊपर से धान का छिलका हट जाने पर ही चावल के भीतर की लालिमा दूर होती है।

दूसरे-कोई भी ऐसा कर्म का क्षयोपशम, क्षय आदि नहीं है कि शरीर पर पहनी हुई टोपी, बनियान, कमीज, कोट, लंगोटी, धोती को उतार कर फेंक दे। यह क्रिया तो विरक्त मनुष्य को स्वयं करनी पड़ती है। तभी अन्तरंग में प्रत्याख्यानावरण कषाय का क्षयोपशम होना सम्भव है।

गुरु-विनय वार्ता

श्री कहान भाई को निर्ग्रन्थ-मुनि-मुद्रा का विनय आदर सत्कार करना चाहिए। सम्यक् दृष्टि जीव निर्ग्रन्थ गुरु का विनयी भक्त होता है। उसके परोक्षज्ञान-गम्य मुनि का द्रव्यलिंग ही होता है, भावलिंग छद्मस्थ के ज्ञान-गम्य नहीं है। अतः महाव्रती दिगम्बर मुद्रा देख कर श्री कहान भाई व उनके साथियों को मनसा वाचा कर्मणा निर्ग्रन्थ साधु की भक्ति उपासना करना उचित है।

श्री सेठ बच्छराज जी गंगवाल के कथन-अनुसार पहले कहानपंथ वालों को अष्ट द्रव्य से पूजन करने का विधि विधान नहीं आता था श्री सेठ लच्छराज जी आदि ने विधि अनुसार कहानपंथ वालों को पूजा प्रक्षाल करना बतलाया। तब वे ठीक तरह से पूजा करने लगे। इस तरह कहानपंथ वालों को दिगम्बर साधु की गुरु-भक्ति करने की विधि भी मालूम नहीं है। मुनियों को आहार कराने की विधि भी कहानपंथ के भाइयों को सीखना उचित आवश्यक है। जिससे कहानपंथ में मुनि का विहार (व्यवस्था) होना संभव हो सके और कहानपंथ वालों को गुरु-भक्ति करने का सौभाग्य प्राप्त हो। गुरु-भक्त होना सम्यग्दृष्टि चिन्ह है।

समाप्त

★

गतांक से आगे

पारसचन्द से बने आर्जवसागर

–आर्यिकारत्न श्री प्रतिभामति माताजी

दूसरे दिन गुरु पूर्णिमा के पावन अवसर पर गुरुवर की पूजा एवं आरती की गई। और गुरुवर ने अपने प्रवचन में गुरु शिष्य परम्परा पर प्रकाश डालते हुए कहा कि किस प्रकार इन्द्रभूति गौतम भगवान महावीर स्वामी से मिले तथा उन्हें प्रथम गणधर बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ इत्यादिक के बारे में बताया तथा दूसरे दिन वीरशासन जयन्ती पर गुरुवर ने समवशरण रचना के 66 दिन के बाद कैसे प्रभु की वाणी खिरी इत्यादि के बारे में बताया। नया बाजार जैन मन्दिर परिसर में गुरुवर के प्रात: 8:30 प्रवचन, तीर्थोदय काव्य का वाचन एवं अपरान्ह में इष्टोपदेश एवं वारसाणुवेक्खा पर अध्यात्म से ओत-प्रोत प्रवचन सम्पन्न हुए। श्री अनूप मिश्रा जल संसाधन मंत्री, म.प्र. शासन ने आकर मुनिवर से आशीर्वाद लिया।

दिनांक 8.8.08 मोक्षसप्तमी के दिन मुनिश्री ससंघ बहुत संख्या में भव्यजनों के साथ सुप्रतिष्ठित केवली की वसुन्धरा गोपाचल पर्वत पर पहुँचे वहाँ पर्वत पर स्थित भगवान पार्श्वनाथ की 42 फुट ऊँची पद्मासन प्रतिमा जो कि अतिशयकारी है उसका महामस्तकाभिषेक किया गया एवं पूजा के साथ लाडू चढ़ाया गया। इसके पूर्व कमिश्नर श्री.एन.त्रिपाठी ट्रान्सपोर्ट ने ध्वजारोहण किया। सिविल जज श्री ए.के. जैन, एडीशनल कलेक्टर आर.के. जैन ने आशीर्वाद लिया। मुनिश्री आर्जवसागरजी महाराज ने अपने प्रवचन में भ.पार्श्वनाथ के जीवन दर्शन एवं कल्याणक के बारे में विस्तार से बताया। दिनांक 16.8.08 को रक्षाबन्धन पर्व बहुत ही हर्षोल्लास के साथ मनाया गया जिसमें महावीर भवन में मुनिश्री के सान्निध्य में विष्णुकुमार मुनि की एवं अकम्पनाचार्य आदि 700 मुनियों की पूजा की गई। गुरुवर ने अपने प्रवचन में यह रक्षाबन्धन पर्व कैसे बना और कैसे मनाना चाहिए इस सन्दर्भ में बतलाया। और षोडसकारण पर्व भी प्रारम्भ हुआ। शताधिक लोगों के व्रत और संयम के साथ सोलहकारण पर्व के कलश की स्थापना भी हुई। पश्चात् ता.4.9.08 से 14.9.08 तक दशलक्षण महापर्व में श्रावक साधना शिविर महावीर भवन में आयोजित किया गया। जिसमें सामूहिक पूजन एवं प्रवचन तथा शिविरार्थियों के लिये दिन में विशेष कक्षाएँ ध्यान, तत्त्वार्थसूत्र का वाचन और उस पर अर्थ सहित प्रवचन, प्रतिक्रमण, गुरुभक्ति के साथ सांस्कृतिक कार्यक्रम रात्रि में आरती एवं विद्वानों के प्रवचन आदि हुये। अन्तिम दिन सामूहिक क्षमावाणी अत्यन्त ही हर्षोल्लास के साथ मनाई गई और सब व्रतियों का सम्मान समारोह भी हुआ।

दशलक्षण पर्व के बाद मुनिश्री आर्जवसागरजी महाराज ससंघ एवं अनेक हजारों श्रद्धालु भव्यगणों के साथ किले पर स्थित (सिन्धिया स्कूल परिसर में) आठवीं सदी के प्राचीन जैन मन्दिर को पाने के लिए एवं सुप्रतिष्ठित केवली का मोक्षस्थान सुरक्षित करने के लिए चल दिये। त्रिशलागिरि पर भ.महावीर के पाँच कल्याणकों आदि का दर्शन करते हुए उरवाही गेट पर स्थित जिन प्रतिमाओं का भी दर्शन करते हुए किले के ऊपर पहुँचे। वहाँ तैलांगना दि. जैन मन्दिर का दर्शन करते हुए सिंधिया स्कूल की ओर बढ़े। इस समाचार को सुनकर पहले से ही वहाँ पर पुलिस तैनात कर दी गई थी। उनको बताया कि हमारे मन्दिर का दर्शन करने हम लोगों को अन्दर जाने दीजिये ऐसा कहने पर भी उन्होंने मना कर दिया। अन्दर जाने से रोक दिया तो युवा लोग दीवार तोड़ने के लिए तैयार हो गये थे। मुनिश्री ने उन सबको रोक दिया कहा हम ऐसे नहीं जायेंगे, स्वीकृति मिलने पर जायेंगे और बाहर से वर्द्धमान मन्दिर का दर्शन किया। और सास-बहु दि.जैन मन्दिर इत्यादि देखते

हुए पुन: नया बाजार मन्दिर में आ गये। अनेक न्यूज पेपरों में एवं पत्र-पत्रिकाओं में यह विषय फैल गया। जैन धर्म का खजाना सबको मालूम पड़ा।

पश्चात् दिनांक 1 अक्टूबर से 12 अक्टूबर 2008 तक जी.वाय.एम.सी के मैदान में सनातनधर्म मन्दिर रोड ग्वालियर में बने विशाल पाण्डाल में श्री 1008 कल्पद्रुम महामण्डल विधान महोत्सव पूज्य मुनिश्री आर्जवसागरजी के ससंघ सान्निध्य में एवं प्रतिष्ठाचार्य पं.गुलाबचन्द्र जी 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्य ब्र.श्री जयकुमार जी निशान्त, पं. मनीष जैन टीकमगढ़, पं. चन्द्रप्रकाश जी चन्दर ग्वालियर द्वारा सम्पन्न कराया गया। इस कल्पद्रुम महामण्डल विधान का महान उद्देश्य किले पर स्थित श्री वर्द्धमान जैन मन्दिर एवं प्राचीन जैन संस्कृति की रक्षा, जीर्णोद्धार करना है इससे जो आय होगी उसे इन्हीं क्षेत्रों पर खर्च किया जावेगा यह निर्णय लिया गया।

दिनांक 21 सितम्बर को प्रात:काल श्री दिगम्बर जैन मन्दिर नया बाजार से मुनिश्री आर्जवसागरजी महाराज ससंघ की हजारों श्रावकों के साथ भव्य शोभा यात्रा बैण्ड-बाजों के साथ चक्रवर्ती एवं प्रमुख पात्र हाथियों एवं बग्गियों में सवार होकर जी.वाय.एम.सी मैदान पहुँची। मुनिश्री के सान्निध्य में प्रतिष्ठाचार्य द्वारा समवशरण रचना हेतु भूमि पूजन करवाया गया। इसके बाद गुरुवर के मंगल प्रवचन हुये एवं प्रात: विधान हेतु पात्र चयन हुआ। सभी जिन भक्तों को भोजन कराने के पश्चात् दोपहर में विधान के शेष पात्रों का चयन किया गया। जिसमें महायज्ञनायक सिंघई महेश गुरु शैलजा जैन, चक्रवर्ती अजय-राधा जैन, सौधर्म इन्द्र बाबूलाल बदामी बाई, ध्वजारोहण कर्त्ता बसन्त-मीना जैन, कुबेर विनोद-मीना जैन, ईशान इन्द्र सुभाष-शीला जैन, यज्ञनायक कपूरचन्द गोडावा, तथा महामण्डलेश्वर, मण्डलेश्वर, मुकुट बद्ध राजा आदि पात्र बने। सभी उपस्थित समुदाय ने भक्ति भावना से भगवान जिनेन्द्र देव की महा अर्चना की एवं मध्यान्ह में कोपरगांव महाराष्ट्र की महिलाओं द्वारा णमोकार मंत्र की महिमा एवं दीप नृत्य प्रस्तुत किया गया।

दिनांक 2 अक्टूबर को प्रात: मन्दिर जी में देव आज्ञा, गुरुआज्ञा, प्रतिष्ठाचार्य निमंत्रण एवं यज्ञ पूजा करने के पश्चात् बैण्ड बाजों एवं बग्गियों में पात्र सवार होकर मुनिवर के सन्निध्य में भव्य शोभा यात्रा के रूप में जी.वाय.एम.सी मैदान में बने पाण्डाल में पहुँची। जहाँ पर ध्वजारोहण कर्ता श्री बसन्त जैन द्वारा ध्वजारोहण किया गया। पं. जयकुमार जी निशान्त द्वारा वेदी शुद्धि, समवशरण शुद्धि, सकलीकरण किया तथा मुनिश्री जी के समवशरण में बैठकर मंगल प्रवचन हुए। समवशरण में सामूहिक कलशाभिषेक, शान्तिधारा, इन्द्र प्रतिष्ठा, जिनबिम्ब स्थापना एवं पूजन विधान हुए। दोपहर में 'अहिंसा रैली' निकाली गई। दोपहर 2 बजे मुनिश्री के विशेष प्रवचन, विश्व अहिंसा दिवस पर हुए एवं भारत के प्रतिष्ठा लब्ध कवि चन्द्रसेन जी, भोपाल के साथ करीब 12-13 कवियों द्वारा कवि सम्मेलन सम्पन्न हुआ।

सुप्रतिष्ठित केवली की मोक्षस्थली गोपगिरि एवं ऋषिगालव की तपोभूमि ग्वालियर में प्रथमबार इतिहास के रूप में श्री 1008 कल्पद्रुम महामण्डल विधान महोत्सव दिनांक 1 अक्टूबर से 12 अक्टूबर 2008 तक जी.वाय.एम.सी मैदान सनातन धर्म मन्दिर रोड ग्वालियर में बने विशाल पाण्डाल में परम पूज्य प्रखर वक्ता धर्म प्रभावक मुनिश्री आर्जवसागरजी के ससंघ सान्निध्य में आध्यात्मिक प्रवचनों आदि के साथ सानन्द सम्पन्न हुआ।

प्रात: शहर के अनेक जिनालयों से भव्यों द्वारा कई थालों में भर-भरकर अष्टद्रव्य लाई जाती थी और संगीतमय पूजन विधान का कार्यक्रम बड़ा ही भव्य मनोरम प्रतीत होता था। शाम को 6 बजे प्रतिदिन इन्द्र-इन्द्राणियों की हाथियों पर सवार होकर, बैण्डबाजों के साथ समवशरण में महाआरती हेतु जी.वाय.एम.सी

प्रांगण पहुँचे। जहाँ संगीत के साथ मन भावन नृत्य के साथ जिनेन्द्र भगवान की आरती हुई। इसके पश्चात् पं. गुलाबचन्द्र जी 'पुष्प' के प्रवचन हुए। रात्रि 9 बजे से सांस्कृतिक कार्यक्रम जिनागम पाठशाला द्वारा एवं राजेन्द्र उमरगा एण्ड पार्टी द्वारा श्रेष्ठ प्रस्तुती दी गई। दिनांक 3 अक्टूबर को दोपहर 3 बजे अहिंसा की विचार यात्रा भ.ऋषभदेव से महावीर पर परिचर्चा हुई। इसके बाद मुनिवर के प्रवचन हुये। दिनांक 2 अक्टूबर से 11 अक्टूबर तक दोपहर संगोष्ठी एवं सम्मेलन तथा मुनिश्री के प्रवचन तथा रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम टीकमगढ़, महाराष्ट्र, ग्वालियर, दिल्ली आदि के कलाकारों के माध्यम से हुआ। दोपहर के संगोष्ठी एवं सम्मेलन में प्रतिदिनश्रेष्ठ एवं प्रसिद्ध वक्ता श्री गोपीलाल जी अमर दिल्ली जी.डी.ए. अध्यक्ष श्री जगदीश शर्मा, साडा अध्यक्ष श्री जयसिंहजी कुशवाह भाजपा अध्यक्ष श्री अजय चौधरी आदि पधारे।

दिनांक 8 अक्टूबर को केन्द्रीयमंत्री ज्योतिरादित्य सिंधिया मुनिश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज से आशीर्वाद लेने हुतु चेम्बर भवन पधारे। करीब एक घंटे चर्चा करने के पश्चात् श्री सिंधिया ने आश्वासन दिया कि जैन धर्म की आस्था का प्रतीक खेल मैदान के निकट वर्धमान जैन मंदिर पूजा अर्चना हेतु जैन समाज को दिये जाने के हित में निर्णय कराकर ही आपके दर्शन करने एवं आशीर्वाद लेने हेतु आऊँगा और मुनिश्री के उपदेश से उन्होंने सप्ताह में एक दिन मांस खाने का त्याग कर दिया। विधान में प्रतिदिन चक्रवर्ती परिवार से किमिच्छिक दान रूप में गरीब लोगों को अनाज, वस्त्रादिक बांटे गये। अन्तिम दिन 12 अक्टूबर को प्रात: विधान पूजा सम्पूर्ण करने के पश्चात् विश्व शान्ति महायज्ञ हवन हुआ। इसके बाद मुनिश्री के मंगल प्रवचन हुए। दोपहर में 1 बजे श्री जी की विशाल भव्य शोभा यात्रा बैण्ड-बाजों के साथ मुनिश्री के सान्निध्य में तीन मंजिले नगर गजरथ यात्रा प्रारम्भ हुई। जिसमें चक्रवर्ती एवं विशेष पात्र आदि गजरथ में एवं समस्त इन्द्र-इन्द्राणियाँ हाथियों एवं बग्गियों में सवार होकर ग्वालियर नगर में प्रमुख मार्गों से होते हुए कार्यक्रम स्थल पहुँचे। जहाँ मुनिश्री ने कल्पद्रुम विधान की महिमा बताई एवं मंगल आशीष दिया। पश्चात् सभी पात्रों का सम्मान किया गया। महायज्ञनायक सिंघई महेशचन्द्र जैन 'गुरु' द्वारा वात्सल्य नगर भोज दिया गया। ग्वालियर नगर में प्रथम बार इतना भव्य एवं विशाल आयोजन हुआ जिसमें तमिलनाडु, देहली, भोपाल, रीवा, झांसी, टीकमगढ़, कोपरगाँव (महाराष्ट्र), दमोह, गुना, अशोक नगर, पथरिया, भिण्ड, मुरैना एवं अन्य जगहों से भारी संख्या में श्रद्धालु पधारे। दिनांक 25 एवं 26 अक्टूबर को अहिंसा शाकाहार विषय पर डाक्टरों की संगोष्ठी आयोजित की गयी थी। जिसमें देश के सुप्रसिद्ध डॉ. के.एम. गंगवाल पूना, डॉ.डी.सी. जैन दिल्ली आदि शताधिक डाक्टरों द्वारा शाकाहार पर सारगर्भित विचार रखे गये एवं मुनिश्री के सम्बोधन व अहिंसा के संकल्प के साथ डाक्टरों को अहिंसक साहित्य वितरित किया गया। पश्चात् कण्ठपाठ प्रतियोगिता प्रारम्भ हो गई।

दीपावली के सुअवसर पर महावीर निर्वाण महोत्सव व निष्ठापन दिवस, ऊपर किले में स्थित वर्द्धमान मन्दिर के सामने पाण्डाल बनाकर हजारों जन समुदाय के बीच यह कार्यक्रम मनाया गया और भ.महावीर के निर्वाण महोत्सव के उपलक्ष्य में 72 किलों का लाडु चढ़ाया गया और भी बहुत संख्या में लाडु चढ़ाये गये थे। एक लाडु सांसद जयभान सिंह पवैया ने भी चढ़ाया और आहार चर्या भी किले पर ही सम्पन्न हुयी थी। बहुत ही भक्ति भाव के साथ यह कार्यक्रम सानन्द सम्पन्न हुआ।

क्रमश:..........

श्री आर्जवसागराष्टकम्

-आर्यिकाश्री 105 प्रतिभामति माताजी

(1)

जैसे जम्बूद्वीप मध्य में, पर्वत मेरू सुशोभित है।
वैसे धार्मिक क्षेत्रों में यह, मध्यप्रदेश प्रशंसित है॥
दमोह जिले के फुटेराकलाँ में, भाद्र शुक्लाष्टमी को।
प्रातकाल में चार बजे वह, मिला सूर्य बालक जग को॥

(2)

शिखरचन्दजी माया माँ का, लाल बड़ा ही न्यारा था।
कान्तिमान सुन्दर सुडोल तन, पारसचन्द सब प्यारा था॥
तीन भाई और एक बहिन सह, धार्मिक शुभ परिवार रहा।
छहढाला व मोक्ष शास्त्र पढ़, बाल्यपने में ज्ञान बढ़ा॥

(3)

पूर्व भव के पुण्य उदय से, भव गृह से वैरागी हुए।
सत्रह वर्ष में ब्रह्मचर्य अरु, सप्तम प्रतिमाधारी हुए॥
विद्यागुरु से अहाराजी में, उत्तम क्षुल्लक धारी हुए।
अतिशयजी थूबोन क्षेत्र में, सु-सौम्य ऐलक धारी हुए॥

(4)

सन अट्ठासी के वीर जयन्ती पर, सिद्ध क्षेत्र सोनागिरी में।
विद्या गुरु के कर कमलों से, मुनि पद पाया शिवमग में॥
एक वर्ष तक मौन है धारा, निज उद्धार किया पावन।
ऐसे आर्जवसागर गुरु को, शत् शत् वन्दन नित अर्पण॥

(5)

इनकी समता ध्यान की मुद्रा, जिनवर याद दिलाती है।
परिषहों को हँसकर सहते, कर्म निर्जरा भाती है॥
व्रत समिति व गुप्ति धर्म में, लीन सदा श्रद्धान अचल।
काव्य कुशलता ग्रन्थ सु-लेखन, सौख्य सुबोधित और सरल॥

(6)

भारत के तेरह देशों में, धीर-वीर बन किया विहार।
मिथ्यादर्शन खण्डन करके, समदर्शन का किया प्रचार॥
सोलह कारण करवा करके, भवि उद्धार किया भारी।
वात्सल्य की बहे नर्मदा, करुणा दृष्टि आति प्यारी॥

(7)

बहुभाषी वे श्रेष्ठ श्रमण हैं, देश विख्यात सु-साधु महान्।
निपुण रहे शिष्यानुग्रह में, धर्म प्रभावक प्रतिभावान॥
वृद्धाचार्य श्री सीमंधर ने, समाधि हेतु पद तुम्हें दिया।
माघ शुक्ला षष्ठी के दिन, आचार्य बने जग धन्य किया।

(8)

जयवंतों गुरु पंच महाव्रत-पालक हित-मित भाषक हो।
जयवंतों गुरु संयम शिक्षा-दीक्षा दायक नायक हो॥
जयवंतों गुरु आर्जवसागर-सूरी जगत सुख दायक हो।
जयवंतों, गुरु तुम पाप विनाशक, शिव पथ उत्तम धारक हो॥

दोहा

आर्जवसागराचार्य के, चरण नमूँ शुभकार।
'प्रतिभा' जीवन में बढ़े, कर दो भव से पार॥

जैन धर्म और विज्ञान

-प्रवचनकार : आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज

परिग्रह दु:ख का कारण है। जहाँ परिग्रह आता है वहाँ तव-मम (हमारी-तुम्हारी) भावना चालू हो जाती है। जहाँ परिग्रह है वहाँ तरह-तरह के संकल्प-विकल्प मन में उठते हैं और यह परिग्रह वात्सल्य-स्नेह को भी नष्ट कर देता है। परिग्रह के प्रति ममत्व-भाव छोड़ने से वात्सल्य-भाव बढ़ता है।

इस संसार में सबसे बड़े (श्रेष्ठ) कौन हैं? जो अपने समान सबको देखते हैं वे ही बड़े हैं। सभी जीव सन्मार्ग पर चलें और हमसे पहले सबको मोक्ष मिले, सुख मिले ऐसा जो भाव करते हैं वे ही सबसे बड़े होते हैं। जिसके पास नाम, ख्याति, पूजा आदि नहीं है और किसी से भी राग-द्वेष-भाव नहीं हैं, वे ही लोक में श्रेष्ठ माने जाते हैं। इस तीन लोक के जीव देव भी क्यों न हों, बड़े-बड़े राजा भी क्यों न हों, सभी उनके चरणों में नत मस्तक हो जाते हैं। क्योंकि उन्होंने सभी जीवों को समान माना है, देखा है, सुखी देखना चाहा है तभी तो वे ही सबसे उत्तम होते हैं।

जो वस्त्रादि सभी परिग्रहों और सम्बन्धों से रहित होकर के जंगल में रहकर जीवन व्यतीत करते हैं वे ही महान आत्मा हैं, उन्हें सभी देवता भी पूजते हैं। वे साधु, मुनि, दिगम्बर, पाणिपात्री, अनगार, आदि नामों से पुकारे जाते हैं। आगम में उनकी स्तुति करते हुए कहा है कि-

गिरिकन्दर दुर्गेषु, ये वसन्ति दिगम्बराः।
पाणिपात्र पुटाहारास्ते यान्ति परमां गतिम्॥

-योगी भक्ति

अर्थात् पर्वतों में, गुफाओं में, दुर्गों में रहने वाले दिगम्बर (वस्त्र, अलंकार से रहित) और हाथों को ही पात्र बनाकर आहार ग्रहण करने वाले, ऐसे वे मुनिगण मुझे परमगति अर्थात् मोक्ष पद को प्राप्त करावें।।

आतिथ्य रूपं मासरं महावीरस्य नग्नहुः।
रूपमुपसदा में तत्तिस्त्रो रात्रीः सुरा सुता॥

(यजुर्वेद अध्याय 19)

अर्थात् अतिथि, मासोपवासी, नग्न-मुद्रा धारक भगवान महावीर की उपासना करने से तीन प्रकार के (कुमति, कुश्रुत, कुअवधि रूप) अज्ञान अंधकार रूपी रात्रि नष्ट हो जाती है। ऐसा ग्रन्थों में गया है।

जोड़ना सरल है, छोड़ना बहुत कठिन है। दूर करना चाहो तो सभी पापों को दूर करना चाहिए। जोड़ने में हमेशा लगे रहते हैं पाँचों पाप चलते ही रहते हैं। इससे दूर होने के लिये पंचेन्द्रियों को संयमित करना पड़ेगा। आत्मा के अंदर जाना पड़ेगा। सभी सम्बन्धों को छोड़कर के ध्यान करना पड़ेगा। इसलिए यह कार्य इतना कठिन लगता है। लेकिन जिन्होंने मोह छोड़ दिया, मुक्ति पाना अपना लक्ष्य बना लिया और जो वैरागी बन गये उनके लिये तो ये संयम और ध्यान सरल हो जाते हैं। सबकुछ छोड़ना बहुत कठिन है। लेकिन हम अपने मन को अपनी ओर मोड़कर जीवन को सरल तो बना सकते हैँ। जितना परिग्रह कम होता है उतना अपने आत्म-ध्यान के

लिये, स्वाध्याय के लिये, ग्रंथ पठन और लेखन के लिये अधिक से अधिक समय मिलता है। उतनी अधिक आत्म शांति भी मिलती है। इसलिए अपना जीवन कैसा होना चाहिए? Simple living and high thinking सादा जीवन उच्च विचार वाला होना चाहिए। सादा जीवन होगा, परिग्रह कम होगा तो साधना रूप जीवन बनेगा। (Facility) सुविधाओं में आराम न करते हुये हमारा मन पवित्र हो, धार्मिक चिंतन हो, ये सब बातें उच्च विचारों में आती हैं। High thinking यही है।

लोक कल्याण की भावना करनी चाहिए। लोक कल्याण की भावना से ही तीर्थंकर भी बनते हैं, जो सुख (मोक्ष) हम प्राप्त करना चाहते हैं उसको हम से पहले सभी जीव प्राप्त करें, यह भावना ही लोक कल्याण की भावना है।

इस लोक में कई धर्म, कई मत हैं। वे सब अपने-अपने स्थान पर अपना-अपना मार्ग बताते हैं। बतलायेंगे भी। मोक्ष किससे होता है? यह बात दूसरी है। लेकिन लोक में अनेक वस्तु व उनके गुणधर्म होते हैं। इसको हम सत् बोलते हैं धर्म है; तो अधर्म भी है। अधर्म है; तो धर्म भी है पुण्य है; तो पाप भी है। संसार है; तो मोक्ष भी है। इस प्रकार एक-दूसरे के अपेक्षा भेद से ही अनेकान्त की स्थापना होती है।

एक वस्तु, दूसरे वस्तु की पूरक होती है। एक धर्म दूसरे धर्म को साथ लेकर चलता है। एक दूसरे का साथ देते हैं। ऐसा ना होता तो अनेकान्त, स्याद्वाद रह नहीं सकता। इसलिए अनेकान्त किसको कहते हैं? यह जानना चाहिए। **''एक वस्तुनिवस्तुत्व निष्पादकं अस्तित्त्व, नास्तित्व, द्वयादि स्वरूप परस्पर विरुद्ध सापेक्ष शक्ति द्वयं यत्तस्य प्रतिपादनम् स्यादनेकान्तो भण्यते॥''**

अनेकान्त का क्या अर्थ है- इसके बारे में कहा है कि- एक पदार्थ में वस्तुत्व का प्रतिपादन करते हुए उसमें अस्तित्व और नास्तित्व दोनों स्वरूप को परस्पर में विरोध न करके अपनी अपेक्षा शक्ति से दोनों का प्रतिपादन करना अनेकान्त या स्याद्वाद कहते हैं।

पर सम्बन्ध से रहित ज्ञान, दर्शन वाली आत्मा शुद्धात्मा है। वही आत्मा किसी अपेक्षा से अपने रूप या पर रूप, अथवा नित्य रूप या अनित्य रूप, एक रूप या अनेक रूप, सत् रूप या असत् रूप आदि से सहित है। ऐसा अनेकान्त बताता है। इसको ऐसा जाने- कि आत्मा ज्ञान की अपेक्षा अपने रूप, मतिज्ञान आदि की अपेक्षा पर रूप है। द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा एक रूप है और पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा अनेक रूप है।

अपने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा असत् रूप है पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा असत् रूप है। द्रव्यार्थिक नय से नित्य रूप और पर्यायार्थिक नय से अनित्य रूप है। पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा भेद रूप है और वही द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा अभेद रूप है।

इस प्रकार आत्मा अनेक धर्मात्मक है यह अनेकान्त से सिद्धि होती है। अनेकान्त के लिये कई परिभाषाएँ हैं- ''अनेकेअन्ताः धर्माः यस्मिन सः अनेकान्तः।'' जो अनेक अन्त अर्थात् अनेक धर्मों से सहित है उसको अनेकान्त कहते हैं। जिसको अनेक नयों से जानते हैं, उसको अनेकान्त कहते हैं। एक वस्तु के अनेक दृष्टिकोणों को जानना अनेकान्त है।

पैर, पेट, पूँछ एवं कान आदि अंग एक हाथी में पाये जाते हैं। अतः हाथी इन सभी से सहित होता है।

इस प्रकार ऐसे ज्ञानी पुरुष की बात सुनकर एक-एक ही अंग पर छठाग्रह कर लड़ने वाले चारों अंधों को जैन धर्म के अनेकान्त, स्याद्वाद धर्म का मर्म ठीक-ठीक समझ में आया। इसी प्रकार धर्मों की सिद्धि भी अनेकान्त से होता है। कथञ्चितवाद, स्याद्वाद भी कहते हैं। कथञ्चित एक अपेक्षा से ऐसा भी है। कथञ्चित एक अपेक्षा से वैसा भी है। वस्तु स्वरूप ऐसा ही है दूसरे प्रकार से है ही नहीं, ऐसा कहना एकान्त हो जायेगा।

''स्यात् कथञ्चित विवक्षित प्रकारेणानेकान्त रूपेण वदनं वादो आलापः कथनं प्रतिपादनमिति स्याद्वादः।''

स्यात् का अर्थ होता कथञ्चित अथवा किसी एक अपेक्षा या दृष्टि से वाद अर्थात् वचन शैली से कथन करना स्याद्वाद रूप अनेकान्त कहलाता है। इस प्रकार किसी अपेक्षा दृष्टि,विवक्षा, अविवक्षा, मुख्य, गौणता, वक्तव्य, अवक्तव्य और अर्पित-अनर्पित ये सब एकार्थ वाचक हैं। वस्तु को अनेकान्त स्वरूप कथन करना यह जैन धर्म का मूल आधार है। जैन धर्म में अनेकान्तात्मक स्याद्वाद रूप वचन-शैली होने से अनेक प्रकार के वाद-विवाद यहीं पर समाप्त हो जाते हैं। अपनी-अपनी दृष्टि से सभी धर्म रहते हैं।

मोक्ष प्राप्त करना है तो एक जैन-धर्म मात्र ही आपको मोक्ष प्राप्त करा सकता है। क्योंकि यहाँ पर राग-द्वेष सहित सभी सम्बन्धों से, इन्द्रिय-विषयों से छूटने का उपाय बताया गया है। वीतराग-विज्ञान के लिये यही मूल आधार है। यह आत्मा द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा शुद्ध है ऐसा आपको श्रद्धान कराता है। एक दिन आप भी वैसी शुद्ध आत्मा बन सकेंगे, ऐसा क्यों बोला जा रहा है क्योंकि पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा से आत्मा अशुद्ध भी है। कर्मबंध की अपेक्षा अशुद्ध है। लेकिन उसे शुद्ध किया जा सकता है। शक्ति की अपेक्षा शुद्ध है, व्यक्तिकरण की अपेक्षा शुद्ध नहीं है। पुरुषार्थ किया तो हम शुद्ध बन सकते हैं।

द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा देखा जाय तो सोना है लेकिन पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा देखा जाय तो किसी आभरण रूप या कि कालिमा से ढका हुआ है, काला है। उसको शुद्ध करना पड़ेगा। उसको जब अग्नि में तपाया जायेगा तब शुद्ध बनेगा और अपनी कान्ति को प्रगट करेगा। वैसे ही आत्मा में भी सिद्ध बनने की शक्ति है। लेकिन अभी उसका व्यक्तिकरण नहीं हुआ है। आत्मा अपनी शक्ति से ही मुक्ति को प्राप्त करती है। इस लोक में जितनी भी भव्यात्मायें हैं वे सब मोक्ष जाने की शक्ति रखती हैं। सभी आत्माओं के पास यह शक्ति नहीं है कोई जीव भव्य होते हैं, कोई अभव्य होते हैं। उदाहरण के लिये जैसे- खड़ी मूंग; उस मूंग को कितना भी पानी में डालो फिर भी उनमें भी ऐसी कोई मूंग होती है जो सीजती नहीं है उसको ठर्रा मूंग कहते हैं। वैसे ही इस संसार में कई आत्मायें हैं, जिनके पास मोक्ष जाने की क्षमता नहीं है और रत्नत्रय प्राप्त करने की भी योग्यता नहीं है। क्योंकि निमित्त मिलने के बाद भी उपादान साशक्त नहीं है, इसलिये मोक्ष नहीं जा सकते हैं। लेकिन भव्य आत्मा हों तो वे कहीं भी रहें नरक-तिर्यञ्च, मनुष्य और देव कहीं भी हों उसके पास मोक्ष जाने की पात्रता है एक दिन वह सुयोग्य मनुष्य बनकर अवश्य मोक्ष जायेगा क्योंकि सामर्थ्य उसके पास है। अपने पुरुषार्थ से सभी भव्य जीव एक दिन मोक्ष जा सकते हैं। लेकिन जो दूरानुदूर भव्य है जो एक प्रकार से भव्य जीव है उसके पास भी मोक्ष जाने की उपादान शक्ति है फिर भी उसके योग्य उन्हें निमित्त नहीं मिलते इसलिए वे मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकते। उपादान और निमित्त दोनों हो तब कार्य बनता है। साधन नहीं तो साध्य नहीं, कारण के बिना कार्य नहीं

सम्पन्न होता है।

धर्म या भगवान मोक्ष नहीं देते हैं। मोक्ष जाने के लिये वे निमित्त मात्र हैं। उनके निमित्त से भव्य, त्याग-तपस्या आदि पुरुषार्थ करके मोक्ष को साधता है। जो सिद्ध बन गये हैं वे सिद्ध; लोक के ऊपर नहीं जा सकते क्यों नहीं जा सकते? क्योंकि उपादान में अनन्त शक्ति होने के बाद भी उन्हें, निमित्त की आवश्यकता पड़ती है। धर्मास्तिकाय रूप निमित्त न होने से लोक के ऊपर नहीं जा पाये। निमित्त मिलने के बाद पुरुषार्थ करें तो कार्य सिद्ध हो सकता है, अन्यथा नहीं। भव्य जीव भगवान बन सकता है इस प्रकार की शक्ति उसके पास है। एक बार भगवान बन गये, फिर वे नीचे भव लोक में नहीं आते हैं और न ही वे लोक की व्यवस्था बनाते हैं।

यह लोक स्वयं अनादिकाल से अपने स्वभाव से ही स्थित है इसको किसी के द्वारा बदला नहीं जा सकता है। इसको कोई बना भी नहीं सकता और न ही इसकी कोई रक्षा ही करता है, तथा न कोई मिटा सकता है। अपने आप में प्रकृतिक रूप से बना हुआ है। अपने आप सुरक्षित है। ब्रह्मा जगत की सृष्टि करता है; विष्णु जगत का रक्षक है और महेश-रूद्र सृष्टि का विनाशक है इत्यादि मान्यता यह सब मिथ्या कल्पना है, सही नहीं है। क्योंकि जैन धर्म में मात्र नहीं; बल्कि हिन्दु धर्म में- तेजोबिन्दु उपनिषद में भी कहा है कि-

''रक्षको विष्णुरित्यादि, ब्रह्मा सृष्टस्तुकारणम्।
संहारे रुद्र इत्येवं, सर्व मिथ्येति निश्चितु॥

अर्थात् ब्रह्मा सृष्टि का कर्ता है, विष्णु सृष्टि का रक्षक है, महेश सृष्टि का विनाशक है ऐसी मान्यता निश्चित रूप से मिथ्या (झूठ)है। मतलब ऐसा श्रद्धान छोड़ना चाहिए, यही सच्चा विचार है। यदि भगवान को लोक के कर्त्ता-धर्त्ता बनायेंगे तो फिर उनके धर्म में भगवान का लक्षण ही नहीं घटेगा। क्योंकि भगवान तो राग-द्वेष, काम, परिग्रह इन सब से दूर होते हैं। कर्त्ता-धर्त्ता बनना उनका काम नहीं है। जीवों को बड़े-छोटे, सुन्दर असुन्दर, गरीब-अमीर बनाना ये ईश्वर का काम नहीं। ईश्वर तो सब कर्मों का नाश करके अपनी आत्मा में लीन रहते हैं। उन्हें सर्वज्ञ कहना भी व्यवहार नय से होता है। सच में तो वे आत्मज्ञ हैं। आत्म-सुख का अनुभव करते हैं। जैसे दर्पण में सब पदार्थ युगपत् झलकते हैं लेकिन दर्पण अपने आप में स्थिर होता है इसी तरह राग-द्वेष से रहित वे भगवान भी अपने आत्मा सुख में लीन हैं। उनके ज्ञान में सभी पदार्थ अपने आप झलकते हैं। इसलिए वे व्यवहार नय से सर्वज्ञ हैं और निश्चय नय से वे आत्मज्ञ कहलाते हैं। अपनी आत्मा में लीन हुये भगवान जब इस संसार को देखते ही नहीं हैं फिर वे इस सृष्टि के कर्त्ता-धर्त्ता कैसे बनेंगे? निश्चित रूप से नहीं बन सकते हैं।

ये सब केवलज्ञान रूप वीतराग विज्ञान की महिमा है आज का यह यांत्रिक विज्ञान इस वीतराग-विज्ञान के आधार से पूर्ण बनेगा। जैनधर्म में वीतराग-विज्ञान ही सभी विज्ञानों का सार है। ऐसे विज्ञान का प्रदाता अनेकान्त, स्याद्वादमय जिन शासन हमेशा जयवन्त रहे।

★

अनमोल वचन

धर्म जैन हो या हिन्दू हो, चाहे हो सिख ईसाई। मुस्लिम बौद्ध सभी में देखो! नहीं कही हिंसा भाई॥
सभी धर्म जो दया मूल है, उसकी बात बताते हैं। नहीं मारना किसी जीव को, यही सबक सिखलाते हैं॥

-आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज

जीवन के मन्दिर पर चढ़ाया समाधि का कलश

-के.देवेन (दास) जैन

जो चेर, चोल, पल्लव जैन राजाओं की कर्मभूमि रही है और जो अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी के प्रमुख शिष्य श्री विशाखाचार्य की तपोस्थली, धर्म साधना, व धर्म प्रभावना से सम्पन्न क्षेत्र कहा जाता है। ऐसे तमिल प्रदेश में जहाँ पर जिनसे अध्यात्म सरोवर प्रवाहित हुआ था ऐसे कुन्दकुन्दाचार्य ने तपस्या की है और जिस गुफा में उन्होंने चौरासी पाहुड़ की रचना की थी। ऐसे पोन्नूरमलै पर्वत से 6-7 किलो मीटर दूर पर स्थित एरम्बूर गाँव के श्री चक्रवर्ती जैन श्रीमति विलासमति जैन परिवार में चार संतानों के बीच तृतीय संतान के रूप में तारीख 20.3.1958 को जिनका जन्म हुआ और नाम राजकुमारी रखा गया। बचपन से धर्म में रुचि थी। बचपन में पैर धीरे-धीरे जमाकर-जमाकर चलती थीं तब लोग कहा करते थे कि हिंसा न हो जाय इसलिए पैर सावधानी पूर्वक रखकर चलती हैं क्या? अभी से इतनी करूणा दृष्टि है इनके अन्दर बड़े होकर आर्यिका बन जायेगी ऐसा लगता है इस तरह लोग कहा करते थे। बचपन में सायंकाल के समय नेमिचन्द्र शास्त्री अपने घर के आंगन में पाठशाला पढ़ाते थे उसमें ये भी पढ़ने जाया करती थीं और रात में शास्त्र स्वाध्याय भी किया करती थीं कहानियों में रुचि रखा करती थीं और उन्हीं से व्रतोपदेश भी ले लिया था। थोड़े-बड़े होने के बाद व्रत वगैरह करने लगीं। अष्टाह्निका, अष्टमी, चतुर्दशी, अनन्त व्रत, दीपावली व्रत, चौबीस तीर्थंकर व्रत, आदि में एकाशन करना प्रारम्भ कर दिया था। जब 19 वर्ष की हो गयी थीं तो माता-पिता ने योग्य वर के रूप में वेम्पारकम् ग्राम के श्री चन्द्रकीर्ति-शान्ता बाई के परिवार में 6 भाई और 2 बहिनों में तीसरे पुत्र श्री कुमार जैन को चुनकर उनके साथ सन् 1977 में इनका विवाह कर दिया था। पश्चात् पोन्नूरमलै से 9 किलोमीटर दूरी पर स्थित वन्दवासी नगर में इनका प्रवास रहा। इनकी दो पुत्री एक पुत्र के रूप में तीन सन्तानें हुईं। उनका नाम बड़ी बेटी का निर्मला जैन, बेटा का देवन् (दास) जैन, छोटी बेटी का पद्ममालिनी जैन रखा। बचपन से ही बच्चों को सुसंस्कारों से संस्कारित करती थीं। शाम को बच्चों को बिठाकर के भजन एवं स्तोत्र पाठ भी सिखाती थीं। कुसंस्कारों से बचाकर अच्छी माँ के रूप में सुहाती थीं। वे अपनी 31 वर्ष की उम्र में सन् 1989 में सम्मेदशिखरजी की यात्रा पर अपने पिताजी के साथ गयी थीं। वहाँ पहुँचकर उन्होंने तीन वंदनायें की थी। तब उन्होंने शिखरजी वंदना की याद में चप्पल पहनने का, व जमीकंद एवं चाय, काफी और होटल में खाने का त्याग कर दिया था। जब दूसरी बेटी होने वाली थी तभी उन्होंने रात्रि भोजन त्याग कर दिया था और अयोध्या, पावापुर आदि क्षेत्रों की वंदना भी की थी। जब-जब तमिलनाडु में साधु संत आते थे तब-तब उनके दर्शनार्थ अवश्य जाती थीं और आहारचर्या में दान देने में आगे रहती थीं। जब करैन्दै गाँव में गजपतिसागरजी की सल्लेखना हुई थी तब समाधि देखने गयी थीं और भावना भायी थी कि हमारी भी त्याग पूर्वक समाधि हो। सन् 1993 में श्रवणबेलगोला के मस्तिकाभिषेक में अपनी छोटी बेटी के साथ यात्रा में गयी थीं। मूढ़बद्री, वरांग आदि कर्नाटक के क्षेत्रों का दर्शन भी किया था। पश्चात् सन् 1995 में मुनि श्री आर्जवसागरजी महाराज ससंघ पोन्नूरमलै दर्शनार्थ पधारे थे। तब एक दिन जब पोन्नूरमलै दर्शनार्थ गयी थीं तब किसी ने कहा कि उत्तर भारत के मुनिराज आये हैं ऊपर विराजमान हैं। तो गुरुवर के दर्शनार्थ जब ऊपर गयी तो गुरुवर सामायिक में विराजमान थे। तब उनकी मुद्रा देखकर मन इतना प्रसन्न हुआ

कि जैसे कि साक्षात् भगवान को ही देख लिया हो दर्शनकर घर चली गयीं। फिर धीरे-धीरे आहार दान देने भी जाती रहती थीं। फिर गुरुवर के सान्निध्य में हुये कल्पद्रम विधान में भी इन्द्र-इन्दाणी के रूप में शामिल हुयी थीं। तब उनके प्रवचन सुनकर संसार परिभ्रमण के कारण रूप मिथ्यात्त्व को छोड़कर सम्यग्दर्शन रूप अमूल्य रत्न को प्राप्त किया। तदुपरान्त प्राय: जहाँ-जहाँ गुरुवर जाते थे वहाँ-वहाँ अपनी सहेलियों के साथ आहार देने जाती थीं। दशलक्षण पर्व में भी जाती थीं। पश्चात् सन् 1998 में पहली प्रतिमाधारी के व्रत गुरुवर आर्जवसागरजी से प्राप्त किये और भक्तामर व्रत (48 उपवास) का नियम लिया। पश्चात् 1998 में ही अपनी बड़ी बेटी के. निर्मला जैन की शादी चेन्नै में करवायी सुबह से पूरी शादी की क्रिया होने के बाद शाम को जब घर आयीं तब उन्होंने शुद्ध भोजन बनाकर आहार ग्रहण किया। इतनी व्रत में दृढ़ता रखती थीं। पश्चात् शुक्ल पक्ष में ब्रह्मचर्य व्रत लेकर गुरुवर आर्जवसागरजी को नई पिच्छिका देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सन् 1999 के फरवरी माह में श्री विशाखाचार्य तपोनिलय में बहुत बड़े रूप में श्री मज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक महामहोत्सव सम्पन्न हुआ था। जिसमें इन्होंने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया और ब्रह्मचारिणी बहिनें की रक्षा हेतु सफेद वस्त्र भी धारण कर लिये और आजीवन नमक, शक्कर का त्याग कर दिया तथा एकाशन करने का भी नियम ले लिया था। इसी वर्ष के चातुर्मास में गुरुवर श्री आर्जवसागरजी महाराज की मंगल प्रेरणा से भाद्रपद माह में षोडशकारण व्रत एक आहार एक उपवास पूर्वक सम्पन्न किया। और अन्त में तीन उपवास भी किये और 16 वर्ष तक इसी विधि से षोडशकारण व्रत करने का नियम भी लिया (सन् 1999 के चातुर्मास में पिच्छिपरिवर्तन के समय पुरानी पिच्छि लेने का सौभाग्य इनको मिला) सन् 2000 जनवरी महिना में हुये में हुये नल्लवन पालायम् के पंचकल्याणक में गुरुवरश्री आर्जवसागरजी महाराज से अपनी छोटी बेटी की उत्कृष्ट भावना से उसे मोक्ष मार्ग में आगे बढ़ाते हुए आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत गुरुवर से दिलवाया और ब्र. पद्ममालिनी बहिन रंगीन वस्त्र छोड़कर सफेद वस्त्र धारण करने लगी। वन्दवासी में नये मन्दिर के आदिनाथ पंचकल्याणक होने तक दूध का त्याग कर दिया था। गुरुवरश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज के आशीर्वाद एवं प्रेरणा से आप अधितर अपने साथ वाली ब्र. वाणीश्री, ब्र क्षेमश्री, ब्र. पद्ममालिनी, ब्र. पटअम्मा, ब्र. सूर्यअम्मा आदि के साथ पोन्नूरमलै में स्थित श्री विशाखाचार्य तपोनिलय के ब्राह्मी श्राविकाय में रहा करती थीं। सन् 2000 में अपने गुरुवरश्री आर्जवसागरजी मुनिमहराज के मंगल आशीर्वाद एवं प्रेरणा से सन्त शिरोमणि आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के दर्शनार्थ सभी व्रती लोग मध्यप्रदेश गये। वहाँ अमरकंटक के दर्शन किये पश्चात् पास के गाँव पेन्ड्रा रोड में आचार्यश्री 108 विद्यासागरजी महाराज के दर्शन किये। और बीच में मिले रामटेक, सिवनी आदि मन्दिरों के भी दर्शन हुये। आर्यिका अनन्तमति माताजी ससंघ के दर्शन का लाभ भी मिला और अपने चौके में आ. अनन्तमति माताजी का पडिगाहन कर आहार देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उन समाधिस्थ आत्मा को साधु संतों का समागम अच्छा लगता था। घर में रहना बिल्कुल पसन्द नहीं था। कब घर से निकल जाऊँ ये मन में भाव रहता था। लेकिन कर्त्तव्यों को पूरे निभाने हेतु घर में रहती थीं। जब गुरुवर तमिलनाडु से विहार करने लगे तब अपनी छोटी बेटी के साथ निभाते हुए गुरुवर का पूरा विहार करवाया। उसके बाद कभी घर में कभी चातुर्मास, विहार आदि में गुरुवर के पास रहती थीं। सन् 2002 का चातुर्मास जब शिमोग्गा में हुआ था तब 5 वीं प्रतिमा के व्रत ले लिये और सन्

2003 में कोपरगाँव चातुर्मास के दौरान गुरुवर से सातवीं प्रतिमा धारण कर ली। चातुर्मास के पूर्व मांगी-तुंगी, गजपंथा, कुन्थलगिरि, कुम्बोज बाहुबली, एलोरा, कंचनेर, पैठन आदि क्षेत्रों की वंदना की थी। पश्चात् 2004 में भोपाल चातुर्मास पर वहाँ के भोजपुर, कुरानाजी, समसगढ़ आदि क्षेत्रों का दर्शन हुआ। और सन् 2005 में आ. विज्ञानमति माताजी के तमिलनाडु विहार पर साथ में रहीं। इसी बीच अपना कर्त्तव्य निभाने हेतु बेटा की शादी में गयी थीं। सन् 2005 में हुये श्रवणबेलगोला के महामस्तिकाभिषेक में आ. विज्ञानमति माताजी के ससंघ के साथ गयीं थी। एक वर्ष के बाद गुरुवर आर्जवसागरजी के सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखरजी की यात्रा में शामिल होने गया नगर पहुँची। वहाँ से पूरा विहार करवाया साथ में इनका भी दर्शन होता गया। राजगृही, पावापुर, कुण्डलपुर, गुणावा, नवादा, एवं सि.क्षे. सम्मेद शिखरजी की 11 वंदनायें हुयीं। गुरुवर के राँची चातुर्मास के उपरान्त पुरुलिया, चम्पापुर, मन्दारगिरि, राजगृही, बनारस, इलाहाबाद आदि होने हुए रीवा तक पूरे विहार का पुण्य लाभ प्राप्त किया। फिर सतना होते हुए गुरुवर का चातुर्मास जब दमोह में हुआ था तब कुण्डलपुर के बड़ेबाबा का भी दर्शन किया। पश्चात् नैनागिरि, द्रोणागिरि, आहारजी, पपोराजी, सोनागिर आदि क्षेत्रों का दर्शन किया। जब ग्वालियर में गुरुवर का चातुर्मास रहा तब वहाँ पर किले के ऊपर स्थित प्रतिमाओं का भी दर्शन किया। तदुपरान्त जब गुरुवर का विहार राजस्थान की ओर हुआ तब शौर्यपुर, मथुरा चौरासी, महावीरजी, पद्मपुरा, सांगनेर एवं जयपुर में स्थित मन्दिरों का तथा चूलगिरि आदि का दर्शन मिला। किशनगढ़, नारेली, अजमेर में स्थित सोनीजी नसियाँ आदि का दर्शन मिला। पश्चात् तिजारा, दिल्ली, हस्तिनापुर, राणोली, रैवासा, लाड़नू, ब्यावर, नसीराबाद आदि क्षेत्रों की वंदना की। गुरुवर के रामगंजमंडी चातुर्मास के उपरान्त चांदखेड़ी, कैथुली, बिजौलिया, उदयपुर, माउण्ट आबू, चित्तौगढ़, तारंगाजी, गिरनार, शत्रुंजय, पावागढ़, सूरत आदि क्षेत्रों के दर्शन किये। पश्चात् 2013 इन्दौर चातुर्मास में 16 वर्ष षोडसकारण व्रत सम्पूर्ण हुआ इसके उद्यापन में सोलहकारण विधान किया और अष्ट प्रतिहार्य, अष्ट मंगल द्रव्य गोयल नगर इन्दौर जिनालय हेतु प्रदान किया। पश्चात् सिद्धवरकूट, बावनगजा, चूलगिरि एवं ऊन (पावागिरि) का दर्शन किये। सन् 2014 में दिसम्बर माह में हरदा के पास अबगाँव में अपने गुरु के सान्निध्य में आचार्यश्री विद्यासागरजी के दर्शन एवं आहार दान देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पश्चात् आचार्य सीमंधरसागरजी महाराज के भी दर्शन एवं आहारदान का सौभाग्य इन्दौर के पास प्राप्त किया एवं आचार्य पद प्राप्ति के समय उपस्थित रहीं। आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज का सन् 2015 का चातुर्मास तारंगाजी में हुआ तब मुनि दीक्षायें देखने का सौभाग्य प्राप्त किया। साथ-साथ में स्वयं आर्यिका दीक्षा हेतु श्रीफल भेंटकर प.पू. आ.गुरुवरश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज से नम्र निवेदन किया। चातुर्मास के अंत में अन्तिम बार तमिलनाडू गयीं और पोन्नूरमलै विशाखाचार्य तपोनिलय में श्री भक्तामर विधान कर वहीं आश्रम में ही दो-तीन दिन प्रवास किया और वन्दवासी जाकर श्री शान्तिनाथ मण्डल विधान बहुत हर्षोल्लास पूर्वक सम्पन्न कर सबसे क्षमा याचना की और दीपावली के दिन पोन्नूरमलै के ऊपर स्थित अतिशयकारी युक्त महावीर के सामने निर्वाणलाडू चढ़ाया। पश्चात् पुन: सि.क्षे. तारंगाजी लौटकर गुरुवर आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के कर कमलों से तारंगाजी क्षेत्र पर ही 6.10.15 को भरे जनसमूह के बीच माँ और बेटी दोनों को आर्यिका दीक्षा प्राप्त हुई। बेटी को आगे करते हुए आ.105 प्रतिभामति नाम रखा गया और माँ को आ.105 राजितमाति माताजी

नाम रखा। पश्चात् वहाँ से विहार करके ईडर, बाँसवाड़ा, रतलाम, बनेडियाजी, मक्सी आदि होते हुए उज्जैन के मन्दिरों का भी दर्शन किया। प्रथम चातुर्मास भोपाल मंडीदीप में हुआ। पश्चात् बरेली जब गये तब उनका स्वास्थ खराब हो गया। वैद्य लोगों ने बताया कि निमोनिया हो गया है फिर इलाज चलता रहा। वहाँ से विहार करके गैरतगंज, बेगमगंज, आदि होते हुए दमोह पंचकल्याणक का मंगल दृश्य देखकर पुण्यार्जन किया। पश्चात् अभाना, जबेरा, नोहटा, कटंगी होते हुए जबलपुर पुरवा में द्वितीय चातुर्मास किया। चातुर्मास के बीच में भी काफी अस्वस्थ रहीं। चातुर्मास के उपरान्त मढ़ियाजी, प्रतिभास्थली आदि विहार करके दर्शन किया। पश्चात् पनागर, बहोरीबंद, पहाड़ी (निवार), बिलहरी आदि दर्शन करते हुए कुण्डलपुर के बड़े बाबा का दर्शन मकरसंक्रान्ति के दिन पैदल किये। पश्चात् बनगाँव, फुटेराकलाँ, पथरिया आदि से विहार करते हुए 8.3.18 को शाहपुर आयीं। उन्होंने अपने जीवन में गुरुवर के मुख से छहढाला, रत्नकरण्डक श्रावकाचार, सर्वार्थ सिद्धि, समयसार, प्रवचनसार, पंचास्तिकाय, इष्टोपदेश, द्रव्यसंग्रह, वारसाणुवेक्खा, तत्त्वार्थसूत्र, उत्तरपुराण, हरिवंशपुराण, तत्त्वार्थवार्तिक, कार्तिकेयानुप्रेक्षा, आत्मानुशासन, समाधितंत्र, स्वयंभूस्तोत्र, पंचस्तोत्र, मुनि प्रतिक्रमण, कुन्दकुन्द भारती, आलाप पद्धति, मूलाचार, सरल नय दर्पण, करणानुयोग प्रवेशिका, जैन सिद्धान्त प्रवेशिका, ज्ञानार्णव, गोम्मटसार, जीवकाण्ड आदि शास्त्रों का अध्ययन किया। दिनांक 13.3.18 को बुखार आने पर उन्होंने उपवास कर लिया। पश्चात् दो दिन अन्तराय हो गया। उसके बाद उनको आहार लेने की इच्छा नहीं रही। पानी, दूध मात्र ले पाती थीं। और अन्तिम दिन 19.3.18 को उनको आहार में जाने की इच्छा नहीं थी जबरदस्ती उठाया गया तो उस दिन पेय लेने का नाम ही रहा बस अञ्जुली छोड़ दी और अन्तिम समय तक अच्छी तरह बोलती रही। बड़े बाबा का मंत्र एवं शान्ति मंत्र का जाप स्वयं ने किया दोपहर में 3 बजे गुरुवर आर्जवसागरजी को नमोस्तु किया और सब कुछ त्याग कर दिया। आहार व दवाई सब का पूर्ण प्रत्याख्यान है ऐसा कह दिया। गुरुवर ने उनको आशीर्वाद दिया। न मरण से उनको डर था, नाही जीने की इच्छा थी और न ही बन्धुओं का मोह था। शाम को 5:30 बजे ज्यादा अस्वस्थ होने पर गुरुवर आ. आर्जवसागरजी महाराज ससंघ सामने आकर बैठ गये और सम्बोधन किया और णमोकार मंत्र बोलना शुरु कर दिया। सभी समाज के लोग भी आकर वैय्यावृत्ति के साथ णमोकार मंत्र के पाठ में जुट गये और णमोकार मंत्र पढ़ते-पढ़ते गुरुवर के ससंघ सान्निध्य में शाम को 6:20 को उनकी समाधि हो गयी। 20.3.18 प्रात:10 बजे इनका डोला पूरे शाहपुर नगर में बेन्ड-बाजे के साथ अपार जन समूह के साथ जुलूस रूप में निकाला गया। जिसमें तमिलनाडू, सागर, दिल्ली, पथरिया, पहाड़ी (निवार), जबलपुर, दमोह, आदि-आदि नगरों से लोगों ने आकर, अपनी भी समाधि ऐसी हो, इस प्रकार की भावना करते हुए चलते रहे। गणेशगंज स्टेशन के पास जैन मन्दिर की जगह पर स्वस्तिक, श्रीफल गोले, चंदन कर्पूर और घृत आदिक से उनकी अन्तिम संस्कार आगम रीति विधि से की गयी। तथाहि शाहपुर (सागर) नगर में हुए अन्तिम संस्कार स्थल पर समाधि धारिका के पूर्व अवस्था के पारिवारिक जनों ने छतरी निर्माण में अपना अमूल्य सहयोग देकर एक इतिहास रचा।

Address : FC-67, HAL OLD TOWNSHIP, HAL OLD AIRPORT ROAD, VIMANAPURA, OPP. KEMP FORTE, BANGALORE - 560017 Mob. : 9620401069

★

ग्राम-ग्राम में धर्म प्रभावना

परम पूज्य आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज निवार पहाड़ी में कुछ दिन के प्रवास में बड़ी धर्मप्रभावना हुई। शीतकालीन प्रवास हेतु बहुत निवेदन करने पर भी गुरुदेव ने दिसम्बर 19 तारीख शाम को विहार करके बिलहरी पहुँचे। बिलहरी में भूगर्भ से प्राप्त करीब 30-35 प्रतिमाओं का दर्शन किया। तीन-चार दिन ठहरकर प्रवचनादि के माध्यम से धर्मप्रभावना हुई। पश्चात् जंगल के रास्ते से चौबीस तारीख शाम को बहोरीबंद पहुँचे। वहाँ पर 26 तारीख को भगवान शान्तिनाथ का महामस्तकाभिषेक का कार्यक्रम सानन्द सम्पन्न हुआ। जिसमें प्रातः कालीन समय श्री शान्तिनाथ महामण्डल विधान किया गया। तथा दोपहर में मंगलाचरण पूर्वक कार्यक्रम शुरू हुआ। आचार्यश्री के पादप्रक्षालन एवं 50 शास्त्र भेंट किये गये। तदुपरान्त अपार जनसमूह से भरे हुए विशाल पण्डाल में आचार्य गुरुवर के मंगल प्रवचन हुये। भ. शान्तिनाथ का महामस्तकाभिषेक ब्र. जिनेश भैय्या वर्णी गुरुकुल जबलपुर के निर्देशन में सम्पन्न हुआ एवं शान्तिधारा गुरुवर के मुखारविन्द से सम्पन्न हुई। 28 ता. को गुरुवर का मंगल विहार हो गया। बचैय्या गाँव से होते हुए मंझोली नगर पहुँचे। चार-पाँच दिन के प्रवास में गुरुवर के मंगल प्रवचन एवं आगमिक चर्या से लोग बहुत प्रभावित हुये। और शीतकाल के लिए बहुत निवेदन किया फिर भी गुरुवर ने विहार कर दिया। सिंग्रामपुर में मंगल पदार्पण हुआ। दो दिन प्रवास के बाद जबेरा नगर में मंगल आगवानी हुई। जबेरा में भी शीतकाल प्रवास हेतु बहुत निवेदन किया। दो दिन प्रवास के उपरान्त वहाँ से भी विहार कर दिया। चोपड़ा होते हुए बनवार पहुँचे। बीच में सगरा के लोगों ने भी अपने नगर पहुँचने हेतु बहुत निवेदन किया। फिर गुरुवर बनवार में एक-दो दिन रहे। यहीं पर सि.क्षे. कुण्डलपुर की कमेटी के लोगों ने आदिनाथ भगवान के मोक्षकल्याणक दिवस का कार्यक्रम गुरुवर के सान्निध्य में मनाने हेतु कुण्डलपुर पधारने के लिए नम्र निवेदन पूर्वक श्रीफल भेंट किये। पश्चात् गुरुवर का मंगल प्रवेश बांदकपुर में हुआ। एक दिन मंगल प्रवचन आहार चर्या वहाँ पर सम्पन्न की। गाँव के लोगों के अन्दर बहुत भक्ति भावना थी गुरुवर को रुकने हेतु बहुत निवेदन किया। लेकिन गुरुवर ने विहार कर दिया। वहाँ से हिंडोरिया होते हुए वमनपुरा में आहारचर्या हुई। पश्चात् 12 जनवरी की शाम को बाजे के साथ क्षेत्र कमेटी एवं जनसमूह द्वारा कुण्डलपुर क्षेत्र पर मंगल आगवानी हुई। जिसमें वहाँ पूर्व से ही ठहरी हुई आ. तपोमति माताजी का ससंघ एवं आ. गुणमति माताजी के संघ ने भी भव्य आगवानी की। पश्चात् 14 तारीख को मकरसंक्रांति को गुरुवर ने पहाड़ की वन्दना की एवं बड़े बाबा के सामने श्री शान्तिनाथ महामण्डल विधान किया गया और गुरुवर के मुखारबिन्द से बड़े बाबा की शान्तिधारा हुई तथा दोपहर में नीचे बने धर्म सन्त निवास पर गुरुवर के मंगल प्रचवन एवं भाव विज्ञान पत्रिका के नये अंक का विमोचन कुण्डलपुर कमेटी ने किया।

15 तारीख को आदिनाथ भगवान का मोक्ष कल्याणक दिवस के दिन बड़े बाबा के समक्ष अपार जन समूह के बीच 50 लाडू समर्पित किये गये और श्री भक्तामर महामण्डल विधान भी सम्पन्न हुआ और 16 तारीख को बड़े बाबा के नये मन्दिर में स्थापना दिवस के रूप श्री बड़े बाबा का विधान किया गया। दोपहर में पथरिया की कमेटी एवं समाज के लोग सिद्ध-चक्र महामण्डल विधान में गुरुवर को पथरिया पधारने हेतु श्रीफल भेंट किये तथा 18 तारीख प्रातः गुरुवर ने ससंघ बड़े बाबा का दर्शन करके पटेरा के लिए विहार कर दिया। दो दिन

वहाँ पर प्रवास रहा। पश्चात् 20 जनवरी को सुबह कुढ़ई के लिए विहार हुआ। वहाँ पर आहारचर्या हुई। दोपहर बनगाँव की ओर विहार हो गया। बनगाँव में भी तीन दिन का प्रवास रहा। तदुपरान्त फुटेराकलाँ वालों के बहुत बार किये गये निवेदन पर फुटेरा की ओर विहार हुआ। सीतानगर में विश्राम करके 24 तारीख को प्रातः कालीन मंगल बेला में मंगल वाद्य ध्वनि के साथ एवं लोगों की जय-जयकार ध्वनि के साथ गुरुवर की जन्मस्थली फुटेराकलाँ में मंगल प्रवेश हुआ।

आचार्य पदारोहण दिवस कार्यक्रम सानन्द सम्पन्न

फुटेराकलाँ में सुबह और दोपहर दोनों समय नगर के बीच बने पण्डाल में गुरुवर के मंगल प्रवचन हुए। 24 तारीख दोपहर में पुनः पथरिया के लोगों ने बहुत संख्या में आकर नगर पधारने हेतु निवेदन किया और 25 तारीख को दोपहर में गुरुवर आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के चौथा आचार्य पदारोहण दिवस हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। जिसमें कु. ऋषिका जैन, कु. प्राची जैन दमोह के मंगलाचरण से कार्यक्रम की शुरुआत हुई। पश्चात् बाहर से पधारे अतिथियों द्वारा चित्र अनावरण एवं दीप प्रज्ज्वलन किया गया। पश्चात् गुरुवर का पादप्रक्षालन का सौभाग्य श्री विजयकुमार संध्या जैन पुरवा जबलपुर वालों को प्राप्त हुआ और गुरुवर के कर कमलों में प्रमुख शास्त्र भेंट करने का सौभाग्य श्री प्रवीण जैन महावीर रोड लाइन्स दमोह वालों को प्राप्त हुआ और लोगों ने भी गुरुवर के लिए शास्त्र भेंट किये। पश्चात् गुरुवर की पूजन भक्ति भाव पूर्वक सम्पन्न हुई। तदुपरान्त संघस्थ मुनिश्री नमितसागरजी महाराज ने आचार्य गुरुवर की महिमा गयी। पश्चात् गुरुवर के मंगल प्रवचन सम्पन्न हुये। 27 तारीख को दोपहर में संगीतमय श्री शान्तिनाथ महामण्डल विधान पाण्डाल में विशेष मण्डल माड़कर बहुत ही भक्ति भाव के साथ नृत्य गान सह सम्पन्न हुआ। जिनेन्द्र भगवान एवं गुरुवर की पूजन एवं आरती की गयी। पश्चात् गुरुवर के मंगल प्रवचन सम्पन्न हुये। 28 तारीख को दोपहर में विशेष मंगल प्रवचन एवं प्रश्नमंच का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। इस प्रकार फुटेराकलाँ में दस वर्ष के बाद पुनः आचार्य गुरुवर के मंगल आगमन पर अपूर्व धर्म प्रभावना हुई। पश्चात् 29 तारीख दोपहर को गुरुवर का ससंघ विहार बह्मोरी भाट होते हुए दिनांक 30 को सुबह खडेरी नगर में दिव्यघोष के साथ मंगल प्रवेश हुआ। दोपहर में गुरुवर के मंगल प्रवचन सम्पन्न हुये। 31 जनवरी दोपहर को वहाँ से केरवना के लिये विहार कर दिया। केरवना में बाजे एवं जय-जयकार ध्वनि के साथ आगवानी हुई। दो दिन के प्रवास के बाद 2 फरवरी को दोपहर पथरिया के लिए विहार कर दिया और शाम को 5 बजे गुरुवर का बचपन जहाँ बीता है ऐसे पथरिया नगर में बेन्ड-बाजे एवं अपार जन समूह के भक्तिभाव के साथ भव्य मंगल प्रवेश हुआ। 4 तारीख को श्री पद्मप्रभु भगवान का मोक्ष कल्याणक एवं 11 तारीख से होने वाले श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान हेतु पात्र चयन का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ

पथरिया नगर में हुई धर्मप्रभावना

आचार्यश्री आर्जवसागरजी के ससंघ सान्निध्य में पथरिया नगर की श्री महावीर दिगम्बर जैन धर्मशाला के बाहर बने विशाल पाण्डाल में दिनांक 10 फरवरी 2018 से 19 फरवरी 2018 तक श्री मज्जिनेन्द्र सिद्धचक्र महामण्डल विधान विशाल समवसरण रचना के बीच सैकड़ों इन्द्र-इन्द्राणियों द्वारा सानन्द सम्पन्न हुआ। जिसमें 10 फरवरी को दोपहर 2 बजे घटयात्रा एवं श्रीजी विराजमान का कार्यक्रम बड़े जैन मन्दिर से विशाल

जुलूस के रूप में निकलकर जैन धर्मशाला तक पहुँची। पश्चात् मण्डप शुद्धि एवं आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के मंगल प्रवचन हुए, शाम को गुरु भक्ति, आरती, भजन, शास्त्र प्रवचन एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि हुये। 11 फरवरी से 18 फरवरी तक प्रतिदिन अभिषेक, शान्तिधारा, नित्यपूजन एवं विधान पूजा प्रारम्भ हुई। प्रात: काल से आचार्यश्री के मंगल प्रवचन भी लोगों को प्राप्त हुये। जिसका अरिहंत चेनल वालों ने कवरेज भी किया। दोपहर में संघस्थ साधुओं द्वारा मंगल प्रवचन हुये और शाम को गुरुभक्ति, आरती, आदि कार्यक्रम हुये। अन्तिम दिन 19 फरवरी को विश्वशान्ति महायज्ञ (हवन) के उपरान्त आचार्यश्री के मंगल प्रवचन हुये। तथा दोपहर में श्री जी की शोभा यात्रा रथोत्सव बेंड बाजे अपार जन समूह एवं गुरुवर के ससंघ सान्निध्य के साथ पूरा नगर भ्रमण कर अपूर्व धर्म प्रभावना पूर्वक सम्पन्न हुई। इस कार्यक्रम में सौधर्म इन्द्र बनने का सौभाग्य श्री कमलेश-विद्या चौधरी परिवार ने प्राप्त किया। इस प्रकार पथरिया नगर में गुरुवर के सान्निध्य में यह कार्यक्रम पहली बार हुआ। इस कार्यक्रम ने सब के मन को प्रफुल्लित कर दिया। पश्चात् बड़े मन्दिर की कमेटी ने बड़े मन्दिर में भी कुछ समय ठहरने हेतु नम्र निवेदन किया और शाहपुर नगर की पूरी कमेटी ने आकर अपने नगर पधारने हेतु श्रीफल भेंटकर नम्र निवेदन किया। पश्चात् गुरुवर 24 तारीख को बड़े मन्दिर बाजे के साथ पहुँचे और 24 फरवरी से 5 मार्च तक सम्यक् ध्यान साधना कार्यक्रम चला। जिसमें बहुत लोगों ने सम्यक् ध्यान शतक को गुरुमुख से सुनने का लाभ प्राप्त किया।

पश्चात् ठहरने हेतु बहुत निवेदन किया जाने पर भी गुरुवर का विहार 8 तारीख को गोरा गाँव के लिए हो गया। पश्चात् दो दिनों की चर्या प्रवचनों के बाद 9 तारीख शाम को शाहपुर नगर में बाजे के साथ मंगल प्रवेश हुआ और कई दिनों के निवेदन का फल उन्हें मिल ही गया। सबने महावीर जयन्ती एवं मानस्तम्भ अभिषेक गुरुवर के सान्निध्य मनाने हेतु श्रीफल भेंट कर नम्र निवेदन किया। प्रतिदिन प्रात: कालीन प्रवचन एवं दोपहर में एकीभाव स्तोत्र की कक्षा व सायं को गुरुभक्ति, आरती के साथ जीवन संस्कार के माध्यम से स्तुति पाठ पढ़ाया जाता था।

19.3.18 को पूज्य आर्यिका 105 राजितमति माताजी की अस्वस्थता के कारण गुरु सान्निध्य त्याग पूर्वक समाधि सम्पन्न हुई। पश्चात् महावीर जयन्ती का कार्यक्रम तीन दिवस के रूप में मनाया गया। जिसमें 27 तारीख को शाहपुर के आ. विद्यासागर हाई स्कूल व सन्मति वीर निकेतन स्कूल के बच्चों के बीच गुरुवर के मंगल प्रवचन हुये। 27 तारीख को दोपहर में जैन स्कूल के शिक्षक-शिक्षिकागण एवं बच्चों सभी बाजे लेकर गुरुवर की आगवानी हेतु जैन मन्दिर तक आये और जुलूस के साथ वहाँ स्कूल के बीच पाण्डाल में गुरुवर मंचासीन हुये। बहिनों द्वारा मंगलाचरण पूर्वक कार्यक्रम की शुरुआत हुई। और बच्चों द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किये गये। तदुपरान्त अतिथियों का सम्मान किया गया और गुरुवर का पादप्रक्षालन एवं भक्ति पूर्वक अर्घ समर्पित किये गये तथा शास्त्र भेंट भी किये गये। तत्पश्चात् गुरुवर आ. आर्जवसागरजी के मंगल प्रवचन सम्पन्न हुये, जिसमें गुरुवर ने भ.महावीर का जीवन दर्शन व गुरु और शिष्य का जीवन और अहिंसा शाकाहार पर उद्बोधन दिये और सभी बच्चों को शाकाहार एवं व्यसन मुक्ति पर नियम दिलाते हुए हाथ उठाकर संकल्पित करवाया। स्कूल में बच्चों की शिक्षा के लिए लोगों ने तीन कम्प्यूटर दान में दिये। तदुपरान्त कमेटी के लोग स्कूल

के अवलोकनार्थ विनयपूर्वक गुरु संघ को स्कूल परिसर में ले गये और अवलोकन कराया। पश्चात् सभी बच्चों को मिष्ठान वितरण किया गया। दिनांक 28 तारीख को दोपहर में पाठशालाओं का सम्मेलन मन्दिर के प्रांगण में किया गया जिसमें नसियाँ मन्दिर दमोह पथरिया, नेहानगर मकरोनियाँ सागर, सानोदा, सन्मति वीर निकेतन शाहपुर, आ. विद्यासागर हाई स्कूल शाहपुर और कंदुवा गाँव आदि की पाठशालायें सम्मिलित हुयीं थीं। जिसमें सबने अपनी धार्मिक कार्यक्रमों की प्रस्तुति दी।

आ. गुरुवर आर्जवसागरजी के लिए अर्घ समर्पण किये गये और भक्तों द्वारा कई शास्त्र भेंट भी किये गये। पाठशाला सम्मेलन में प्रथम स्थान नेहानगर, मकरोनिया सागर की पाठशाला को, द्वितीय स्थान नसियाँ मन्दिर दमोह को और तृतीय स्थान आ. विद्यासागर हाई स्कूल बच्चों को प्राप्त हुआ। जिन्हें दो तरह के मोमन्टो एवं सभी विद्यार्थियों को सांत्वना पुरस्कार प्रदान किये गये। तृतीय दिवस 29 मार्च को प्रातः कालीन मंगल बेला में मानस्तम्भ में स्थित चतुर्मुख भगवान का आठ मुख्य कलश एवं 100 छोटे सुन्दर कलशों द्वारा जिनाभिषेक एवं गुरु के मुखारबिन्द से शान्तिधारा सम्पन्न हुई। पश्चात् आचार्य गुरुवर का मंगल प्रवचन सच्चा जन्म कब होता है? इस विषय पर सम्पन्न हुये। दोपहर में आ. आर्जवसागरजी महाराज का 31वाँ मुनि दीक्षा दिवस हर्षोल्लास पूर्वक मनाया गया। जिसमें दमोह के ऋषिका जैन, प्राची जैन द्वारा मंगलाचरण किया गया। और दिल्ली से पधारे लोकेश जैन ने अपनी गुरुश्रद्धा को भजन के रूप में व्यक्त किया। पश्चात् गुरुवर का पाद प्रक्षालन का सौभाग्य सूरत से पधारे श्री वैशाली जैन ने अपने पुत्र के साथ प्राप्त किया। मुख्य शास्त्र भेंट का सौभाग्य श्री लोकेश जैन दिल्ली वालों को और 31 शास्त्र अन्य विशिष्ट भक्तों द्वारा भेंट किये गये। तत्पश्चात् संगीतमय भक्तिपूर्वक सुन्दर सजी अष्ट द्रव्यों के थालियों के साथ गुरुवर की पूजन की गयी। 31 दीपों से आरती उतारी गई। तत्पश्चात् मुनिश्री महत्सागरजी ने अपने ऊपर गुरु उपकार का फल दर्शाते हुए उद्बोधन दिये। पश्चात् गुरुवर के मंगल प्रवचन महावीर के जीवन दर्शन पर सम्पन्न हुआ। तदुपरान्त शाहपुर में गुरुवर द्वारा सम्यक् ध्यान शतक पर प्रवचन चलता रहा। दोपहर में आ. प्रतिभामति माताजी द्वारा तीर्थोदय काव्य के ऊपर कक्षा चली। शाम को भक्तामर स्तोत्र अर्थ सहित पढ़ाया गया। पूरी समाज ने आचार्य गुरुवर से ग्रीष्मकालीन प्रवास हेतु श्रीफल भेंटकर नम्र निवेदन प्रस्तुत किया।

बिम्ब और प्रतिबिम्ब में अंतर होता है

संत शिरोमणि 108 आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज

आचार्यश्री ने कहा कि बिम्ब और प्रतिबिम्ब में अंतर होता है । बिम्ब किसी वस्तु का स्वभाव व उसके गुण आदि होते हैं परन्तु उसका प्रतिबिम्ब अलग - अलग हो सकता है। यह देखने वाले की दृष्टि पर निर्भर करता है कि वह उस बिम्ब में क्या देखना चाह रहा है? यदि सामने कोई बिम्ब है और उसे दस लोग देख रहे होंगे तो सबके विचार उस प्रतिबिम्ब के प्रति अलग - अलग हो सकते हैं । किसी को कोई चीज अच्छी लगती है तो वही चीज किसी और को बुरी लग सकती है परन्तु इससे उस बिम्ब के स्वभाव में कोई फर्क नहीं पड़ता है । जैसी आपकी मानसिकता और विचार उस बिम्ब के प्रति होंगे वैसा ही प्रतिबिम्ब आपको परिलक्षित होगा ।

सम्यग्ज्ञान भूषण एवं सिद्धान्त भूषण पदवी हेतु ध्यातव्य विषय सामग्री

- सम्यग्ज्ञान-भूषण एवं सिद्धान्त भूषण उपाधि प्राप्त करने हेतु आवेदन पत्र माह जून 2018 के अंक में प्रकाशित किया जायेगा।
- इन उपाधियों को प्राप्त करने के लिये भाव विज्ञान पत्रिका का सदस्य होना अनिवार्य नहीं है।
- परीक्षार्थी अवश्य रूप से सप्तव्यसन व मद्य, मधु, मांस का त्यागी एवं तीर्थंकर व उनकी जिनवाणी का श्रद्धालु होना चाहिए।
- जो महानुभाव भाव विज्ञान पत्रिका के सदस्य हैं उन्हें परीक्षा-सामग्री भाव विज्ञान पत्रिका के साथ संलग्न रूप से प्राप्त होगी। एवं उन्हें डाक व्यय भेजना आवश्यक नहीं होगा।
- जो महानुभाव पत्रिका के सदस्य नहीं हैं उन्हें परीक्षा सामग्री पृथक रूप से पंजीकृत डाक से प्रेषित की जावेगी।
- उपाधि प्राप्त करने वाले श्रावकों को प्रत्येक तीन माह में एक बार सौ प्रश्नों के उत्तर साफ-सुथरे रजिस्टर के पेपर्स पर उत्तर-पुस्तिका के रूप में भरकर भेजना होगा।
- जो महानुभाव भाव विज्ञान पत्रिका के सदस्य नहीं हैं उन्हें सम्यग्ज्ञान-भूषण तथा सिद्धान्तभूषण उपाधि हेतु परीक्षा-सामग्री प्राप्त करने हेतु डाक व्यय के रूप में 400-400/- रुपये परीक्षा आवेदन पत्र के साथ पृथक रूप से भेजना होगा। (दोनों उपाधियों हेतु कुल 800/- रुपये)
- अपनी राशि निम्नलिखित बैंक के खाता नम्बर पर जमा करें :- **''भाव विज्ञान'' भोपाल के पक्ष में (ड्राफ्ट अथवा) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, टी.टी. नगर, भोपाल में नेट/कोर बैंकिंग सुविधा के अंतर्गत सेविंग बैंक एकाउंट नंबर-63016576171 एवं IFS Code SBIN0030005 में नगद राशि सीधे जमा कर प्रकाशक को रसीद की छायाप्रति प्रेषित करें।**
- उत्तर पुस्तिका पर अंक देने का भाव उत्तर पुस्तिका में वर्णित उत्तरों की शुद्धता लिखावट आदि पर निर्भर करेगा।
- परीक्षार्थी से ऑनलाइन या फोन द्वारा उत्तर पूछने की पहल भी की जा सकती है अत: अपने आवेदन पत्र पर ई-मेल या अपने परिचित का ई-मेल एड्रेस या फोन नम्बर अवश्य लिखें।
- उत्तर काट दिये जाने पर या घिस दिये जाने पर अंक नहीं दिये जायेंगे।
- परीक्षा सामग्री प्राप्त होने के एक माह के अंदर उत्तर पुस्तिका अवश्य प्रेषित करें।
- परीक्षार्थी की अन्य किसी के नाम से उत्तर पुस्तिका भरकर प्रेषित किये जाने पर हमारे परीक्षा बोर्ड द्वारा उन्हें उपाधि हेतु मान्य नहीं किया जायेगा।
- उत्तर पुस्तिका डाक/पोस्ट से निम्न पते पर प्रेषित की जानी चाहिये:-

डॉ. सुधीर जैन, 85, डी.के. कॉटेज, दानापानी रेस्टोरेंट के पास,
ई-8, एक्सटेंशन, भोपाल (म.प्र.) मो. 9425011357

भाव-विज्ञान जैन धर्म प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता

नियमावली :

१. उत्तर लिखने वाले या उसके पारिवारिक सदस्य की भाव विज्ञान पत्रिका संबंधी आजीवन सदस्यता होनी अनिवार्य है। एक परिवार से एक ही उत्तर पुस्तिका स्वीकार्य होगी । अन्य नहीं।

2. प्रश्न पत्र के पेपर पर ही उत्तर लिखकर भेजें । फोटो कॉपी मान्य नहीं होगी।

3. उत्तर पुस्तिका पर अंक देने का भाव उत्तर पुस्तिका में वर्णित उत्तरों की शुद्धता, लिखावट एवं उम्र पर निर्भर करेगा। अल्प उम्र वाले प्रतियोगी को प्रमुखता दी जावेगी।

4. उत्तर लिखकर काट दिये जाने पर या घिस दिये जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।

5. उत्तर पुस्तिका की प्रतियोगी को एक फोटोकॉपी करवा लेना चाहिये क्योंकि मुख्य उत्तर पुस्तिका में कोई गलती न हो एवं अगली भाव विज्ञान पत्रिका में आने वाले उत्तरों का प्रतियोगी मिलान कर सके।

6. पत्रिका पहुँचने के पन्द्रह दिनों के भीतर उत्तर अवश्य प्रेषित करें। पत्रिका प्रकाशित होने के एक माह के बाद प्राप्त उत्तर पुस्तिकाएँ प्रतियोगिता हेतु मान्य नहीं की जावेगी।

7. पुरस्कार की राशि मनीआर्डर या बैंक आदि से भेजी जावेगी। प्रतियोगी प्राप्त मूल्य का उपयोग अपने तीर्थ वंदना, पूजा द्रव्य दान, आहार दान, औषधदान, उपकरण दान, पाठशाला की यूनिफार्म आदि धर्म कार्य के द्रव्य में सम्मिलित कर सकते हैं।

8. अगली भाव विज्ञान पत्रिका में सभी श्रेणियों के पुरस्कार विजेताओं के नाम प्रकाशित किये जावेंगे।

9. उत्तर पुस्तिका डाक/पोस्ट से निम्न पते पर प्रेषित की जानी चाहिए।
डॉ. प्रोफेसर सुधीर जैन, ८५, डी.के. कॉटेज, दानापानी रेस्टोरेंट के पास, ई-८ एक्सटेंशन, भोपाल (म.प्र.)

* **उपरोक्त प्रतियोगिता के बारे में हमारा उद्देश्य है कि बाल-युवा पीढ़ी भी स्वाध्याय के क्षेत्र में आगे बढ़े एवं घर-घर में चले धर्म संस्कार की पाठशाला।**
प्रथम पुरस्कार : 108 योग्य संख्यक मूल्य, द्वितीय पुरस्कार: 72 योग्य संख्यक मूल्य
तृतीय पुरस्कार : 57 योग्य संख्यक मूल्य

पुरस्कारों के पुण्यार्जक श्री विनोद कुमार जैन, 591, कंचन विला, कृष्ण विहार, वी.के. कोल नगर, (अजमेर राजस्थान)

उत्तीर्ण प्रतियोगी परिचय

दिसम्बर 2017

प्रथम श्रेणी

श्रीमती कमला केशरी चंद जैन
सरकारी नर्सरी के पीछे,
नूतन नगर, खरगोन (म.प्र.)

द्वितीय श्रेणी

श्री ओमचंद श्यामलाल जैन
8, महावीर कॉलोनी, दाल बाजार
लश्कर, ग्वालियर

तृतीय श्रेणी

श्रीमती नीलम प्रदीपकुमार जैन
असाटी वार्ड नंबर 2 जैन बड़ा मंदिर दमोह

उत्तर पुस्तिका दिसम्बर 2017

1. मिथिलापुरी	2. पद्मावती	3. जातिस्मरण
4. वैश्रवण राजा के	5. हाँ	6. हाँ
7. हाँ	8. हाँ	9. श्वेत वन
10. मल्लिजी	11. 6 दिन	

12. भ. मुनि सुव्रतनाथ के काल में श्रीराम बलदेव, हनुमान कामदेव, लक्ष्मण नारायण और रावण प्रति नारायण हुये।

13. 300	14. 18	15. लव कुश
16. 40,000	17. गलत	18. सही
19. सही	20. सही	

भाव-विज्ञान जैन धर्म प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता

समय : 15 दिन, अंक : 100

- ❖ 20 प्रश्नों में से प्रत्येक प्रश्न पर 5-5 अंक समान हैं।
- ❖ इन प्रश्नों में से एक प्रश्न का उत्तर दो लाइनों में वाक्य सहित लिखना अनिवार्य है।
- ❖ उत्तर राष्ट्रभाषा हिन्दी में लिखें। लिखकर काटे या मिटाए जाने पर अंक नहीं दिए जाएँगे।

सही उत्तर पर (✓) सही का निशान लगावें-

प्र.1. भ. नमिनाथ के पिताजी का नाम क्या था?

श्री सुमित्र ( ) श्री विजयराज ( ) श्री समुद्रविजय ( )

प्र.2. भ. नेमिनाथ की दीक्षा तिथि क्या थी?

पौष कृष्णा 10 ( ) मगसिर कृष्णा 10 ( ) श्रावण शुक्ला 6 ( )

प्र.3. भ. नमिनाथ के समवसरण का विस्तार कितना-था?

3 योजन ( ) $2\frac{1}{2}$ योजन ( ) 2 योजन ( )

प्र.4. भ. नेमिनाथ के वैराग्य का कारण क्या था?

पूर्व भवस्मृति ( ) पशु बंधन का दृश्य ( ) मेघ पटल नाश ( )

हाँ या ना में उत्तर दीजिये-

प्र.5. भ. नमिनाथ अपराजित अनुत्तर विमान से अवतरित हुए। ( )

प्र.6. भ. नमिनाथ ने सिद्धार्थ नाम की पयार्य में तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया। ( )

प्र.7. भ. नेमिनाथ के काल में ब्रह्मदत्त नामक चक्रवर्ती हुआ। ( )

प्र.8. श्री नारायण के द्वारा ही प्रतिनारायण घात होने का नियम है। ( )

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:-

प्र.9. भ. नेमिनाथ के काल में .... नामक अर्ध चक्रवर्ती हुये।

(जरासन्ध, पद्म, श्रीकृष्ण)

प्र.10. भ. नेमिनाथ के समवशरण में प्रमुख गणधर .... थे।

(कुंभजी, वरदत्तजी, अरिष्टसेनजी)

प्र.11. भ.नमिनाथ के समवसरण में प्रमुख आर्यिका .... थी।

(मार्गिणी, राजमति, भाविता)

दो पंक्तियों में उत्तर दें:-

प्र.12. भ.नेमिनाथ के विवाह पर पशुओं को बंधन में क्यों रखा था?

....

....

....

सही जोड़ी मिलायें:-

प्र.13. भ. नमिनाथ का मोक्षस्थान	-	तारंगा जी
प्र.14. भ. प्रद्युम्नकुमार का मोक्षस्थान	-	शत्रुंजय जी
प्र.15. तीन पाण्डवों का मोक्षस्थान	-	सम्मेद शिखरजी
प्र.16. भ. वरदत्तादि का मोक्षस्थान	-	गिरनारजी

सही (✓) या गलत (×) का चिन्ह बनाइये:-

प्र.17. भ.नमिनाथ के काल में बलराज नाम के कामदेव हुये। ( )

प्र.18. भ. नेमिनाथ का जन्म द्वारिका में हुआ था। ( )

प्र.19. भ. नमिनाथ बाल ब्रह्मचारी थे। ( )

प्र.20. भ. नेमिनाथ की प्रथम पारणा श्रीदत्त राजा के यहाँ हुई थी। ( )

आधार

1. उत्तर पुराण, 2. जैनागम संस्कार

- -

प्रतियोगी-परिचय

भाव विज्ञान सदस्यता की रसीद क्रमांक :

नाम .... **उम्र** ....

पिता/माता/पति का नाम ....

नगर या गाँव का नाम ....

पता..

....

मोबाईल/फोन नं. ....

सदस्यों को भाव विज्ञान प्रेषित करते समय लिफाफे के पते पर रसीद क्रमांक का लेख भी किया जाता है।

भाव विज्ञान परिवार

❄❄❄❄❄ शिरोमणी संरक्षक ❄❄❄❄❄

मेसर्स आर.के. ग्रुप, मदनगंज-किशनगढ़, अजमेर, ● श्री जैन निर्मल कुमार झांझरी, डीमापुर (नागालैंड)।

❄❄❄❄ परम संरक्षक ❄❄❄❄

● श्री जैन गौतम काला, राँची ● श्री बुधराज जैन कासलीवाल, पांडीचेरी

❄❄❄ पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक ❄❄❄

● प्रबंधकारिणी समिति, श्री १००८ पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, कीर्तिनगर, जयपुर ● सकल दिगम्बर जैन समाज, दाँतारामगढ़, जिला सीकर ● श्री कुन्थीलाल रमेशचंद नरेश कुमार जैन गदिया, नसीराबाद (अजमेर) ● **रामगंजमण्डी :** सकल दिगम्बर जैन समाज एवं वर्षायोग समिति 2011, श्री जैन ताराचंद मित्तल परिवार एवं महेशकुमार अशोक कुमार महेन्द्र कुमार जैन ठोरा।

❄❄ पुण्यार्जक संरक्षक ❄❄

● श्री जैन नीरज सुपुत्र श्रीमती चन्द्रकला पाटनी, रांची ● सुशील कुमार, अभिषेक रोहित कुमार जैन, पांडीचेरी ● श्री मिट्ठनलाल जैन, नई दिल्ली।

❄ सम्मानीय संरक्षक ❄

● श्री वर्धमान विक्रमादित्य जैन, गोवा ● श्री जैन पदमराज होळल, दावणगेरे ● श्री जैन सोहनलाल कासलीवाल, सेलम ● श्री जैन संजय सोगानी, राँची ● श्री जैन आकाश टोंग्या, भोपाल ● श्री महावीरप्रसाद संजयकुमार जैन, इस्पात एंटरप्राईजेस प्रा.लि., कलकत्ता ● श्रीमती जैन संगीता हरीश बजाज, टीकमगढ़ ● श्रीमती कमलाबाई अशोक जैन साहबजाज, अजमेर ● श्री जैन बी.एल. पचन्ना, बैंग्लुरू ● श्री घनश्याम जैन, कृष्णा नगर, दिल्ली ● **जयपुर :** श्री जैन कमलजी काला, कु. इन्द्रसेना जैन, ● **सूरत :** श्री नरेश जैन, (दिल्ली वाले), श्री जैन निलेशभाई शाह। ● **पथरिया (दमोह) :** श्रीमती जैन उषा पदम मलैया।

❄ संरक्षक ❄

● श्री जैन विजय अजमेरा, रीवा ● श्री के. सी. जैन, डि. एक्साइज अधिकारी, छतरपुर ● श्री अजित प्रसाद जैन सराफ, रेवाड़ी ● **दिल्ली :** श्री विजयपाल जैन, शाहदरा, श्री राकेश जैन, रोहिणी ● श्री दिगम्बर जैन तीर्थ बड़ा मंदिर, हस्तिनापुर (मेरठ) ● श्री संजय जैन, गुड़गांव ● श्रीमती सुषमा रवीन्द्र कुमार जैन, गाजियाबाद ● श्री जैन कल्याणमल झांझरी, कलकत्ता ● **भोपाल:** श्रीमती सुधा महेन्द्र कुमार जैन, श्री प्रेमचंद जैन ● श्री कस्तूरचंद सुरेश कुमार जैन, रामगंज मण्डी, कोटा ● श्रीमती जैन हीरामणी चांदमल सेठी, गुवाहाटी ● श्री जैन विमलचंद मोहित कुमार ठोलिया, पांडीचेरी ● श्रीमति विमला मनोहर जैन, सूरत ● **जयपुर :** श्री एस.एल. जैन (बागड़िया), श्री जैन गुणसागर ठोलिया-किशनगढ़-रेनवाल, श्री जैन श्रेयांस कुमार पाटोदी, श्रीमती जैन अनिता पारस सौगानी, श्री जैन जितेन्द्र अजमेरा, श्री जैन ओम कासलीवाल, श्री जैन मंगलचंद हरकचंद मोतीलाल कमलचंद छाबड़ा, श्री विजय कुमार जैन छाबड़ा ● **उदयपुर :** श्री प्रकाशचंद जैन, श्रीमती निधी राहुल जैन-अनुपम ग्रुप ऑफ कम्पनीज, श्री जैन अशोक कुमार ड्वारा ● **इंदौर :** श्री सचिन जैन, स्मृति नगर ● **पथरिया (दमोह) :** श्री मुकेशकुमार जैन (संजय साईकिल)।

❄ विशेष सदस्य ❄

● **दमोह :** श्री मनोज जैन दाल मिल, ● **अजमेर :** श्री भागचन्द जैन, नसीराबाद ● **सूरत :** श्री जैन हर्षद भाई मेहता, श्री जैन अरविंद भाई गांधी, श्री जैन संयम संदीप भाई शाह, श्री जैन रमेश मोहनलाल दौसी, श्री जैन कोठारी बाबूलाल कचरालाल, श्री जैन कन्हैयालाल कचरालाल मेहता, श्री जैन कमलेश शाह, श्री जैन हसमुख मगनलाल शाह, श्री जैन चम्पालाल लक्ष्मीलाल सिंघवी, श्री जैन नीलकेष बालू शाह मढ़ी, श्रीमती जैन सुनिता विद्या प्रकाश दीवान, श्री जैन अशोक कुमार गंगवाल खाच्छरियावास, श्रीमती जैन गुणमाला देवी दीपचंद सेठी, डॉ. जैन संकेत मेहता ● **भोपाल:** श्री राजकुमार जैन।

❄ नवागत सदस्य ❄

● **पथरिया (दमोह):** श्री संजय जैन बुन्देलखण्ड , श्री अभय जैन गुड्डे, श्री नेमीचंद जैन बड्डे, श्री रतनचंद जैन दवग्गर, श्री ऋषभ सिंघई, श्री जैन पदम फट्टा प्रदीप जैन, श्री जैन महेन्द्र फट्टा, श्री नरेन्द्र जैन केरबना, श्री जैन मदन बड़कुल, श्री जैन रमेश गोयल, श्री वीरेन्द्र जैन मेडीकल, श्री अभय जैन मुड़ी साब, श्री आनंद जैन वकील साब, श्रीमती जैन नीता प्रवीण फट्टा, श्री जैन कमलेश चौधरी, श्री शिखरचंद नवीन कुमार जैन, श्री जैन पदमचंद ज्ञानचंद सराफ, श्री जैन सुभाष सिंघई, श्री राजेश जैन रन्छोड़ी ● **मवाना (मेरठ):** श्री आशीष धनेन्द्र कुमार जैन ● **शाहपुर (गणेशगंज):** श्री जैन पवन सिंघई, डॉ. जैन रतनचंद संजीवकुमार भारिल्ल, श्री जैन सुशील संकेत कुमार (सिंघई मेडिकल), जैन शिक्षा प्रचार समिति (आ. विद्यासागर स्कूल), श्री जैन चंद्रकुमार बड़कुल, श्री जैन पवन भारिल्ल, श्रीमती प्रभा जैन (बड़ी बाईजी), श्री कूबचंद राजेशकुमार जैन, श्री जैन नीरजकुमार उज्ज्वल मोदी, श्रीमती नीलम जैन, श्री सुरेशचन्द आशीषकुमार जैन।

भाव विज्ञान पत्रिका की सदस्यता हेतु आवेदन-पत्र

मैं .... मधु (शहद), मांस, मद्य (नशा) का त्यागी, धर्म का अनुसरण करने वाला पिता/पति श्री ....
जिला .... प्रदेश ....से
भाव विज्ञान पत्रिका पुर्ण्याजक विशेषांक संरक्षक सदस्य रूपये 24500/- ☐ परम संरक्षक रुपये 21000/- ☐ पुण्यार्जक संरक्षक सदस्य रुपये 18,000/- ☐ सम्मानीय संरक्षक सदस्य रुपये 11,000/- ☐ संरक्षक सदस्य रुपये 5,100/- ☐ विशेष सदस्य रुपये 3,100/- ☐ आजीवन (स्थायी) सदस्यता रुपये 1,500/- ☐ राशि देकर आजीवन सदस्यता स्वीकार करता/ करती हूँ।

मेरा वर्तमान व्यवहारिक का पता :- ....
....
जिला .... प्रदेश ....
पिनकोड .... एस.टी.डी. कोड ....
फोन नम्बर .... मोबाईल ....
ई-मेल .... है।

दिनांक : हस्ताक्षर

कार्यालयीन उपयोग हेतु

श्री/श्रीमति .... पिता श्री .... को शिरोमणी संरक्षक/पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक/परम संरक्षक/पुण्यार्जक संरक्षक/सम्मानीय संरक्षक/संरक्षक/विशेष सदस्य/आजीवन सदस्यता क्रमांक ....प्रदान की जाती है।

दिनांक हस्ता. सम्पादक/प्रबन्ध सम्पादक

आशीर्वाद एवं प्रेरणा : संत शिरोमणी आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज से दीक्षित आचार्यश्री आर्जवसागर जी महाराज

पत्रिका की विशेषताएं एवं उद्देश्य :

☞ विशिष्ट साधक आचार्यों या साधुओं के और डाक्ट्रेट व विशिष्ट विद्वानों के शिक्षाप्रद आलेखों, प्रवचनों एवं समीक्षाओं का प्रस्तुतिकरण
☞ सत् साहित्य समीक्षा। ☞ अहिंसात्मक जीवन शैली। ☞ व्यसन मुक्ति अभियान।
☞ हिंसक पदार्थों व हिंसक सौंदर्य प्रसाधन का निरसन।
☞ नई पीढ़ी के लिए वैज्ञानिक शैली में जैन दर्शन का प्रस्तुतिकरण।
☞ रूढ़िवाद, मिथ्यात्व व शिथिलाचार रहित अनेकान्त, स्याद्वाद और सापेक्षवाद शैली में जैनत्व का प्रस्तुतिकरण।
☞ धार्मिक प्रश्नोत्तरी व काव्य संग्रह की प्रस्तुति।
☞ धार्मिक पर्व आयोजन व मुनि संघ समाचार प्रस्तुति इत्यादि। ☞ प्रतिभा सम्पन्न प्रतियोगियों के लिए सम्मानित करना।

नोट : ''भाव विज्ञान'' भोपाल के पक्ष में (ड्राफ्ट अथवा) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, टी.टी. नगर, भोपाल में नेट/कोर बैंकिंग सुविधा के अंतर्गत सेविंग बैंक एकाउंट नंबर-63016576171 एवं IFS Code SBIN0030005 में नगद राशि सीधे जमा कर प्रकाशक को रसीद की छायाप्रति प्रेषित कर सदस्यता शुल्क की रसीद प्राप्त की जा सकती है।

सदस्यता आवेदन पत्र भेजन का पता

''भाव विज्ञान'' एम-8/4, गीतांजली काम्पलैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 (म.प्र.) को प्रषित करें।
सम्पर्क : डॉ. अजित कुमार जैन - 09425601161, डॉ. सुधीर जैन - 09425011357

कृपया पत्रिका को पढ़कर अपने परिजन को दें या किसी दि. जैन मंदिर, वाचनालय अथवा किसी दि. जैन धर्म क्षेत्र पर विराजमान कर दें।

कृपया यहाँ से निकालें

महावीर जयंती के उत्सव पर शाहपुर में श्री जी की विमानोत्सव से शोभा यात्रा।

महावीर जयंती पर श्री जी की शोभायात्रा में आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज ससंघ एवं भारत देश के भक्तगण

महावीर जयंती के उत्सव में आर्यिकाश्री प्रतिभामति माताजी आदि।

महावीर जयंती एवं दीक्षा दिवस पर चित्र अनावरण करते हुए भक्तगण एवं अतिथिगण।

महावीर जयंती पर शाहपुर नगर में अरविन्द जैन, सागर का सम्मान करते हुए।

दिल्ली से पधारे लोकेश जैन आदि का सम्मान करते हुए शाहपुर समाज के मुनि भक्त।

शाहपुर में सी.कुमार चेन्नै का सम्मान करते हुए मंदिर कमेटी के गणमान्य लोग।

सूरत से पधारे अतिथियों का सम्मान करते हुए शाहपुर (गणेशगंज) के भक्तगण।

रजि. क्रं. MPHIN/2007/27127

शाहपुर में आचार्यश्री आर्जवसागरजी के 31वें दीक्षा दिवस पर उपस्थित जनसमुदाय।

दमोह से पधारे मुनिभक्त शाहपुर में दीक्षा दिवस पर सम्मानित होते हुए।

मुनिश्री महत्सागरजी महाराज के पूर्वावस्था के पारिवारिक जनों का सम्मान करती हुईं शाहपुर की महिलाएँ।

शाहपुर में महावीर जयंती एवं दीक्षा दिवस पर सम्मानित होते हुए भोपाल से पधारे अतिथिगण।

आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के 31 वें मुनि दीक्षा दिवस पर उनकी मंगल दीपों से आरती उतारते हुए भक्तगण।

दीक्षा दिवस पर आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज की पूजन करती हुईं शाहपुर नगर की पाठशाला की बहनें।

शाहपुर नगर में महावीर जयंती पर माँ मायाबाई का सम्मान करती हुईं महिला वर्ग।

शाहपुर नगर में महावीर जयंती पर्व पर प्रवचन देते हुए आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज।

स्वामी एवं प्रकाशक : श्रीमती सुषमा जैन द्वारा मुद्रक : पवन कुमार जैन द्वारा पारस प्रिन्टर्स, 207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं एमआईजी-8/4, गीतांजली काम्पलेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित।
सम्पादक - डॉ. अजित कुमार जैन, MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 फोन : 0755-4902433, 9425601161